नुष्य बनो

जुलाई

वा०मू०
८-००

7/83

शरणागति, शुभ संकल्प,

क्षमा, प्रेम,

निष्काम कर्म, ब्रह्मचर्य पालन,

ाल फकीर चन्द जी महाराज

होशियारपुर (पंजाब)

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जॉय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य ८-०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अंक निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र. ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

R. S.

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

❀ मनुष्य बनो ❀

वर्ष ३३	ज्येष्ठ, आषाढ़ संवत २०४० वि०	अङ्क ८,९

नाम

नाम सनेही ! नयनों में आजा !

आँखों की कोठरी बनाई, पुतली पलंग विचित्र सजाई ।
पलकों की चिक विमल लगाई, आजा ! आँखों में तू समा जा ॥

नैन हमारे तेरे दीवाने, रूप अनूप देख ललचाने ।
छबि अद्भुत को निरख लुभाने, सूना मन्दिर आज बसा जा ॥

प्रेम पियाला पी मतवाली, आँखें बनीं सहज रतनाली ।
ध्यान तेरा कर हुई निहाली, प्रीत की पाली अङ्ग लगा जा ॥

बिन दर्शन के फल नहिं आवे, हिया जिया रात दिवस अकुलावे ।
बिरह लगन की आग तपावे, बचन बूँद रस छिड़क बुझा जा ॥

राधास्वामी सतगुरु प्रीतम प्यारा, तू है इन आँखों का तारा ।
चरन कमल का दे के सहारा, बिगड़ी मेरी आके बना जा ॥

—०—

क्षमा याचना

गत माह कुछ आर्थिक परेशानियों के कारण एवं प्रेस कर्मचारियों की कमी के कारण हम माह जून का अंक नहीं निकाल सके। इसलिये माह जून एवं जुलाई का अंक एक करना पड़ा तो इससे हमारे ग्राहक बन्धुओं को जो कष्ट वहन करना पड़ा है उसके लिए हम क्षमा चाहते हैं।

—प्रकाशक

निवेदन

जिन ग्राहक भाइयों ने 'मनुष्य बनो" को वार्षिक शुल्क अभी तक नहीं भेजा है वह शीघ्र भेजने की कृपा करें। ताकि हम पत्रिका को सुचारू रूप से चला सकें। अन्यथा मजबूर होकर हमें पत्रिका भेजना बन्द करना पड़ेगा।

—प्रकाशक

शोक समाचार

श्री के० सी० ग्रोवर साहब को अधिकांश महाराज जी के दौरों पर साथ रहा करते थे दि० २-७-८३ को इस नाशवान शरीर को त्याग कर परमधाम को सिधार गये हैं। मालिक से प्रार्थना है कि वह उन्हें अपने चरणों में स्थान दे एवं उनके शोक संतिप्त परिवार को इस अथाह दुख को वहन करने की शक्ति प्रदान करे।

—सम्पादक

कर्म सुधार

दोहे

कथनी बदनी छांड़िकर, करनी सों चितलाय ।
नर को नीर पिलाये बिन, कबहूँ प्यास न जाय ॥१॥

मन ही को परबोधियो, मन ही को उपदेश ।
जो वह मन वश आवही, तो शिष्य होय सब देश ॥२॥

मन मुरीद संसार है, गुरु मुरीद कोई एक ।
जो माने गुरु बचन को, ताका मता अगाध ॥३॥

बात बनाई जग ठग्यो, मन परबोध्यो नांहि ।
कबीर यह मन ले गया, लख चौरासी माँहि ।.४॥

करनी करनी सब कहे, करनी मांहि विबेक ।
वह करनी वह जान दे, जो नहिं परखे एक ॥५॥

करनी सोई कीजिये, जासों आपा जाय ।
बैर भाव उपजे नहिं, मन में प्रेम बढ़ाय ॥६॥

करनी कर्म विवेक बिन, उपजावे संसार ।
कहें कबीर इस योग से, उतरे नहिं भव पार ॥७॥

— ० —

गुरु महिमा

बिन गुरु ज्ञान विवेक न होई। गुरु बिन पन्थ न चाले कोई ॥
गुरु से लेना नाम रसायन। घट से भागे शंका डायन ॥
मन परतीत गुरु की लाओ। गुरु मिले तब भक्ति कमाओ ॥
गुरु बिन काम करो नहिं भाई। गुरु चरनन पर बल बल जाई ॥
राखे मन में गुरु प्रतीती। हो सुख सकल कामना जीती ॥
गुरु हैं दाता गुरु हैं दानी। गुरु आराधो छिन छिन प्रानी ॥
गुरु समान नहीं कोई रक्षक। कुल कुटम्ब सब जानो तक्षक ॥
सत्त नाम सत पुरुष गुरु हैं। अलख अगम राधास्वामी गुरु हैं ॥
गुरु की कीजे हरदम पूजा। गुरु समान कोई देव न दूजा।
गुरु चरनन पर बल बल जाऊँ। आठ पहर गुरु का यश गाऊँ ॥
गुरु को सुमिरूँ गुरु को ध्याऊँ। माथे गुरुपद रज को लगाऊँ ॥
गुरु ने गुप्त भेद दिया दान। गुरु ने सार बताया आन ॥
गुरु ने अलख वस्तु लखवाया। गुरु ने अगम रूप दरसाया ॥
जब लग नहीं गुरु भक्ति दृढ़ानी। तब लग निसदिन रहे अज्ञानी ॥
रात अन्धेरी आँख न सूझे। केहि विधि प्रेमी गुरु पद बूझे ॥
गुरु मिले गुरु पद दरसाया। आंख खुली अन्धकार हटाया ॥
तेज पुञ्ज का भया प्रकाश। ज्ञान सूर ने किया उजास ॥
घन घमन्ड अज्ञान समान। जुड़ मिल अन्धकार किया आन।
ज्ञान सूर गुरु बचन प्रकासा। देखत सकल अविद्या नासा ॥
सत्त सत्त का सत प्रगटाया। आतम परमातम दरसाया ॥
घट में प्रगटा सत का तूर। बाजे निसदिन अनहद तूर ॥

—०—

तत्व दर्शी से—

काली कमली वाले बाबा

लेखक—महर्षि शिवव्रतलाल बर्मन

जो कारज धन नहिं करे, करे न बल शरीर।
सो कारज साहस करे, जो होवे मन धीर॥

(देव कवि जी)

साहस तू धन्य है। साहसी मनुष्य सब कुछ कर सकते हैं। हृदय में दृढ़ इच्छा शक्ति के होने की आवश्यकता है।

फिर जहाँ उसने अपने हाथ पाँव सभाले कठिन से कठिन कार्य भी सुगम हो जाते हैं। रुपया वाले हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हैं उनसे कुछ नहीं हो सकता, साहस वाले आकाश में सोपान लगाते हैं। जिसका चित एकाग्र है, जिसकी इच्छा शक्ति दृढ़ है वह जो चाहे सो कर सकता है संसार में हजारों और लाखों की संख्या में धनाढ्य जगह २ पड़े हैं, उनसे कुछ करते धरते नहीं बनता परन्तु एक साधारण स्थिति का मनुष्य जहाँ साहस और दृढ़ इच्छा शक्ति से काम करने लगा, वह आश्चर्य और अचम्भा कर दिखाता है।

बुधदेव जी के पास न धन था न बल था परन्तु उन्होंने अपने जीते जी सारे संसार को विजय कर लिया और किसी भी प्रति पक्षी को साहस नहीं हुआ कि वह उनके काम में दोषारोपण कर सके। न कहीं रक्तपात का अवसर आया, और न उनको अपने उद्देश्य के फैलाने में पाखण्ड से काम लेना पड़ा, न उन्होंने किसी राजा का सहारा लिया और न किसी धनिक का मुँह ताका, केवल अपनी इच्छा शक्ति से और दृढ़ साहस से संसार के तख्ते को पलट दिया। श्रीस्वामी शंकराचार्य जी महाराज भी धन और तन दोनों बलों के विचार से हीन थे। परन्तु बारह वर्ष की आयु से लेकर तीस वर्ष की आयु तक केवल साहस और दृढ़ इच्छा शक्ति के बल से हिन्दू जाति को कुछ का कुछ बना दिया। और अब भी संसार उनके उच्च विचारों को देखकर भौचक रह जाता है। और उनका नाम सुनते ही श्रद्धा के साथ उनके श्री चरणों में झुक जाते

हैं। कबीर साहब कोई मुल्क व माल वाले नहीं थे। मुसलमानों के समय में एक तुच्छ जाति जुलाहा कुल में उत्पन्न होकर इस प्रकार हिन्दू धर्म की रक्षा की, कि देखने की आँख रखने वाला बिना धन्यवाद कहने के नहीं रहता। उनके जीवन काल में ही अद्वैतवाद संसार में गूंजने लगा था। उनकी आयु में ही कई ऐसे पुरुष उत्पन्न हो गये थे कि जिन्होंने चिरकाल तक उसको प्रचलित रखने का यत्न किया। राजपूताना में दादू साहब, अवध में जगजीवन साहब, पंजाब में गुरु नानक साहब, बम्बई की ओर कमाल साहब उनके मत के प्रचार के लिए उठ खड़े हुए। और अब तक उसमें असाधारण जीवन दिखाई देता है।

इन महात्माओं के पास संसार का कोई सामान नहीं था, परन्तु सबको उनका लोहा मानना पड़ा, इन सबका साहस और इच्छा शक्ति आश्चर्य था। वह नदी की धारा बनकर बह निकला। और सबको अपने अधीन कर लिया यह साहस बालों के कार्य हैं। जिन में साहस है वह सब कुछ भी कर लेते हैं। जिन में साहस नहीं है वह कुछ भी नहीं कर सकते। संसार में जो कुछ दिखाई देता है वह सब साहस और इच्छा शक्ति का चमत्कार है।

=०=

काली कमली बाले बाबा भी इसी प्रकार के साहसवान और प्रबल इच्छा धारी पुरुष थे। उनके साहके को आज दुनिया सराहना कर रही है।

यह महात्मा पंजाब प्रान्त के जिला गूजरावाला में किसी जिख्य के यहाँ उत्पन्न हुए थे। माता पिता ने इनका नाम बधावासिंह रखा था। रूप रंग के सुन्दर और दीर्घकाय थे। नेत्र विशेष रूप से मनोहर थे। हाथ पाँव लम्बे और सुडौल थे, बाल्यकाल में फारसी और गुरुमुखी की शिक्षा पाई थी गुरु नानक साहब की वाणी बड़े प्रेम से पढ़ा करते थे। गुरू महात्माओं के श्री चरणों में बिशेष प्रेम रखते थे। जब युवा हुए तो संसार के काम काज में लगाए गए, परन्तु इनके मन में किसी और प्रकार के विचार उठते थे। निदान समय आ गया जब सरदार बधावासिंह ने घरबार को सदा के लिए त्याग कर

दिया। और सब प्रकार के झंझट को छोड़कर किसी और धुन के पीछे लग खड़े हुए।

मार्ग में बहुत से बेदान्ती सन्यासियों से मिलने का अवसर हुआ। उनके सत्संग से बड़ा लाभ हुआ, वेदान्त का रंग चढ़ गया। अब यह अवस्था हुई कि सरदार साहब को नाम और रूप के बन्धन में मोक्ष पाने की इच्छा हुई। प्रकृति ने किसी विशेष कार्य की पूर्ति के लिए इन्हें उत्पन्न किया था। बिना उसकी पूरा करने कैसे चैन ले सकते थे।

इन्होंने अपना सरदार नाम त्याग कर काली कमली वाले बाबा रक्खा। जगत में इसी नाम से विख्यात हुए, नाम और रूप का त्य गना कोई सहज बात नहीं। यह संसार ही नाम और रूप से बना है। और यह नाम रूप ही वास्तव में जगत है। जब नाम और रूप मिट जाते हैं तो प्रकृति अपनी साम्यावस्था में चली जाती है, और प्रलय हो जाती है। जो इस सृष्टि व प्रलय के भेद को अच्छी तरह समझ लेते हैं वही मुक्त होते हैं। फिर उनको नाम व रूप के बन्धन नहीं सताते और न उनका आवागमन होता है।

काली कमली वाले बाबा ने सबसे पहले इसी को धक्का लगाया, परन्तु संसार में ज्ञानी होते हुए भी कर्मयोगी के गुण साथ लाए थे। इसलिये उन्होंने उचित समझा कि अपने तजर्बों और बुद्धि से दूसरों को लाभ पहुँचावें। उनके शिष्यों की संख्या बहुत थी। बम्बई राजपूताना, अदन, हांगकाँग, जञ्ज बारादि तक के हिन्दू सेठ इनके शिष्य थे। इन्होंने एक भारी पुस्तक भाषा में लिखी जो 'पक्षपात रहित अनुभव प्रकाश" के नाम से प्रसिद्ध है। यह बहुत सरल भाषा में बच्चों तक के समझने योग्य है। हमने स्वयं इस ग्रन्थ को पढ़ा है। यह ग्रन्थ सचमुच बहुत उत्तम और उपयोगी है।

.....

चिरकाल तक वेदान्त की शिक्षा में प्रवृत रहने के पश्चात बाबाजी को देशाटन का ध्यान आया, इन्होंने रामेश्वर, द्वारिका और पुरी की यात्रा की। अन्त में बद्रीनारायण की यात्रा का ध्यान आया और इस विचार से हरिद्वार आए। और वहां से अकेले पैदल बद्रीनारायण गए। पहाड़ी मार्ग बड़ा कठिन

था। खाने पीने की सामग्री नहीं मिलती थी : न कहीं ठहरने की जगह थी। बाज २ जगह पहाड़ों में मीलों तक पानी नहीं मिलता था। और यात्री तो खाने पीने की सामग्री साथ रखते थे परन्तु यह सिवाय काली कमली के और कुछ नहीं रखते थे। इसलिये इन्हें बड़ा कष्ट मिला। जब वहां से लौटकर हरिद्वार आये तो अपने मन में विचार किया कि जब एक साधू मनुष्य को इस मार्ग में इतना कष्ट होता है तो बेचारे गृहस्थियों को कितना कष्ट होता होगा। यह बात मन में आते ही इन्होंने प्रतिज्ञा की कि बद्रानारायण का दुख दूर करना चाहिए।

इस विचार से आप बम्बई और राजपूताना में फिर कर अपने सेठ शिष्यों को प्रेरित किया, और सबसे पहले हरिद्वार में बहुत बड़ी कोठी जो इन्हीं के नाम से विख्यात हैं निर्माण कराई यह धर्मशाला है। यहाँ यात्री बिना कुछ किराया आदि देने के ठहर सकते हैं। यहाँ उनको सदाव्रत में आटा, दाल, घी नमक, गुड़ आलू और हल्दी मुफ्त मिलती है। जब इससे छुट्टकारा मिला तो आपने पहाड़ी मार्ग मे जगह २ यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशाले और कुएं बनवाये। हरिद्वार से चलकर तीन तीन मील की दूरी पर यह इमारतें और कुएं मिलते हैं। हरिद्वार से सूर्य नारायण का मन्दिर सात आठ मील के फासले पर है। इन दोनों स्थानों पर धर्मशालाओं के साथ पक्की दुकानें बन गई हैं। जिनमें खाने पीने की सामग्री सहज में मिल जाती है। इन धर्मशालाओं पर टीन के तख्तों पर मोटे अक्षरों में लिखा है "यह धर्मशाला काली कमली के बाबा की आज्ञा से अमुक सेठ ने बनवाई है। यहां यात्री केवल दो घन्टे विश्राम कर सकता है। सूर्यनारायण का मन्दिर रात भर ठहरने और विश्राम करने का स्थान है। वहां पर एक औषधालय भी मौजूद है। जहां मोटे अक्षरों में लिखा है कि इस जगह "काली कमली वाले बाबा की आज्ञा से यात्रियों को मुफ्त औषधि दी जाती है।

सूर्यनारायण के मन्दिर के पश्चात ऋषिकेश आता है। जो वहां से आठ मील की दूरी पर है। यहां भी वैसे ही स्थान बनाए गए हैं। जो सबके सब काली कमली वाले बाबा की ओर से हैं। और चढ़ाई अधिक है वहां दो ही

मील की दूरी पर धर्मशाले कुएं और दुकाने वर्तमान हैं ।

ऋषिकेश में एक बहुत बड़ा धर्मशाला दुछत्ता बना है । जिसमें राजपूताना, मध्य भारत, बम्बई, गुजरात के यात्री ठहरते हैं ।

हम स्वत: किसी धर्मशाला में नहीं ठहरे । सबसे अलग थलग गङ्गा के किनारे खुले मैदान में डेरा जमाया था, ऋषिकेश में उस समय ११ हजार के लगभग साधू बसते थे । उनमें से बहुतों को कमली बाबा के क्षेत्र से भोजन मिलता था ।

जिस समय हम ऋषीकेश से आगे बढ़े, तो चढ़ाई कुछ कठिन थी । लक्ष्मण झूला वहां से ३ मील दूर है । उसके बीच में केवल एक दुकान मिली और एक छप्पर के तले ठण्डे पानी के घड़े यात्रियों के लिये तैयार थे । यहाँ भी काली कमली वाले बाबा का नाम लिखा हुआ पाया । थोड़ी देर दम लेकर लक्ष्मण झूला ज पहुंचा । पहाड़ की गहरी घाटी है जिसमें गंगा वेग के साथ बहती है । ऋषीकेश में गंगा जोर से बहती है परन्तु इस जगह बहुत गहरी है । पहले यहाँ एक झूला रस्सों का था और उसको पकड़कर यात्री बड़ी कठिनता से पार होते थे । बहुत से नीचे गिर भी जाते थे । और उनकी हड्डी तक का पता नहीं मिलता था । कमली बाबा ने इस घाटी के दोनों ओर ईंटों के खम्भे बनवाकर लकड़ियों का पुल बनवा दिया है । पुल के तख्ते पर लिखा हुआ था "काली कमली बाबा के अमुक २ सेठों ने चालीस हजार की लागत से यह पुल तैयार कराया । यहां भी उनकी ओर से सदाव्रत बँटता है । और धर्मशाला बनी है पीपल वृक्ष के तले बहुत बड़ा चबूतरा बनाया गया है । कुछ देर तक हम गंगा के किनारे ठहरे रहे फिर ऋषीकेश लौट आये ।

मन में कमली वाले बाबा के लिये श्रद्धा का भाव उत्पन्न हुआ, उनकी धर्मशाला में जाकर विशेष वृतान्त जानने की इच्छा हुई । बाबा के शिष्यों में से एक आत्मानाथ जी बड़े स्नेह भाव से मिले । वहाँ छपी हुई एक सूची वर्तमान थी जिसमें छत्तीस से अधिक सदाव्रत और धर्मशालों का वर्णन था । जो बाबाजी की ओर से प्रचलित हैं । नाथ जी ने पूछने पर कहा कि इस

प्रकार के धर्मशाले हरिद्वार से लेकर बद्रीनारायण तक बने हैं और सब जगह यात्रियों के सुख का ध्यान रखा जाता है। अब तक इस काम में साढ़े पन्द्रह लाख रुपया लग चुका है। और यद्यपि पहाड़ों में ईंट चूने आदि का प्रस्तुत करना बहुत कठिन है, परन्तु फिर भी बाबा जी की आज्ञा से यह काम किसी न किसी प्रकार होता रहता है। हमने बाबाजी के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की उत्तर मिला कि बद्रीनारायण तक मार्ग साफ कराने और धर्मशाले बनवाने के उद्देश्य से वह गुप्त हो गए हैं।

यह उसका संक्षिप्त वृतान्त है जो केवल एक कम्बल ओढ़े हुए परोपकार के निमित्त सारे देश में चक्कर लगाता रहा और अपनी इच्छा शक्ति को दृढ़ता के साथ स्थापन कर गया।

उनका जीवन धन्य है। उससे हम बहुत कुछ शिक्षा लाभ कर सकते हैं। कमली वाले बाबा आदर्श कर्म योगी थे। उनमें विचित्र साहस था। एक कार्य अपने ऊपर ले लिया और मन की सारी शक्ति उधर लगा दी। वह पूरा हो गया, जिनका चित्त डावाडोल होता है उनका कोई काम नहीं सुधरता वह कदम २ पर ठोकरें खाते हैं। मनुष्य जिन्दगी में केवल एक काम को हाथ लगावें और उसको पूरा कर दिखावें। यह एक प्रबल इच्छा है जो काली कमली वाले बाबा हमको सिखा गए हैं। ईश्वर करे इस प्रकार के पवित्रात्मा हमारे बीच में बहुत से उत्पन्न हों, और वह इस प्रकार ऋषिभूमि को फिर से शोभायमान बनाने का यत्न करें।

× = ×

बल्लूजी चम्पावत

संसार में उत्साही भी हैं, निरुत्साही भी हैं। सहिष्णु भी हैं, अहिष्णु भी हैं। जहाँ गुलाब के पुष्प पर भँवरे मँडराते हैं रहते हैं साथ ही उसमें कांटे

भी होते हैं। पानी में कमल और कोंक दोनों ही रहते हैं। समुद्र को मथकर देवताओं ने विष और अमृत दोनों ही निकाले थे। हमारे और तुम्हारे हृदयों में पवित्रता और अपवित्रता दोनों प्रकार के विचार उठते रहते हैं। जहां गंगा है वहाँ कर्म नाशा भी है। पहाड़, समुद्र, जल, थल, सुगन्धी, दुर्गन्धी, सुख, दुःख दोनों साथ २ रहते हैं। यह द्वन्द की सृष्टि है। यहाँ सब जगह विरोध है। ब्रह्मा ने इनको इसी प्रकार बनाया है। इसमें वह मनुष्य धन्य समझा जाता है जो किसी उच्च आदर्श को पूरा कर जाता है। संसार में उसी को यश, कीर्ति और बड़ाई मिलती है। नेकियाँ विविध प्रकार की हैं। भलाई के आदर्श भी कई प्रकार के होते हैं जिसने अपने उद्देश्य को पूरा कर लिया लोग उसकी प्रशंसा करते हैं। जो पद किसी साधू महात्मा को मिलता है वही एक सच्चे शूरवीर और क्षत्री को मिलता है। प्रश्न केवल इतना है कि वह कहाँ तक अपने आदर्श की पूर्ति के लिये कितना अपने आपको बली कर सकता है संसार में कोई वस्तु बिना मूल्य देने के प्राप्त नहीं होती। और जो जितना मूल्य देता है उसको वस्तु भी उतनी ही मिलती है। संसार में केवल एक काम ले लो, अधिक काम न करो, उसी को सब कुछ समझो। और फिर तुम ऐसी कृतकार्यता लाभ करोगे कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता यदि बहुत से कामों को हाथ में लोगे तो "एक सिर हजार सौदा" की बात होगी और तुम कुछ करते धरते न बन पड़ेगा।

इस समय जिस मनुष्य के आत्म त्याग का हम वर्णन करते हैं वह एक शूरवीर और योधा क्षत्रिय था। उसका नाम राजपूताना में बल्लीजी चम्पावत प्रसिद्ध है। उसका जीवन अति शिक्षा दायक है।

सम्वत् १६६ विक्रमी में जोधपुर में महाराजा गजसिंह जी राज करते थे, अमरसिंह उनका पुत्र था। यह लड़का यद्यपि बड़ा शूरवीर था और शत्रु इसके नाम से काँपते थे, किन्तु इसमें नट खट होने का दोष भी था, प्रजा इससे दुःखी रहा करती थी। महाराजा ने कई बार समझाया भी पर वह अपने अभ्यास को छोड़ न सका। निदान विवश होकर उसे देश अच्छुत कर दिया। और अन्तम बार यह वचन उसको कहे :—"पुत्र ! मैं तुम्हारा

पिता हूं, पिता पुत्र का सम्बन्ध बड़ा गूढ़ है। परन्तु तुम इस बात को कदाचित जानते होंगे कि राजा को प्रजा का ध्यान पुत्र से भी बढ़कर रखना चाहिये। इसीलिये मैं तुम्को देश में अच्युत करता हूं। जोधपुर की प्रजा तुमसे दुखी है। जोव जब तक जोधपुर की प्रजा फिर तुमको न बुलावे तब तक इधर को मुख न करना। तुमको राजा की आज्ञा माननी चाहिये। नगर के फाटक पर ११ श्याम वस्त्रधारी मनुष्य मिलेंगे वह तुम्हारा साथ देंगे। जिधर सींग समाय उधर चले जाव। रातपूत सिंह का बच्चा है, उसका असली साथी उसकी तलवार है। और मैं क्या कहूँ।

पुत्र चुपचाप पिता के वचन सुनता रहा, जब उसने अपने वचन समाप्त किये तो उसको नमस्कार करके चल पड़ा। फाटक पर घोड़ा तैयार था, वहां उसने काले वस्त्र पहन लिये और घोड़े पर सवार होकर अपने साथियों समेत एक ओर को चल पड़ा।

उसके साथियों में से एक का नाम बल्लू जी चम्पावत था। उसने अमरसिंह से प्रतिज्ञा कर रखी थी कि विपद काल में मैं हमेशा तुम्हारा साथ दूँगा। जब उसने सुना कि अमरसिंह को राजा ने घर से निकाल दिया है तो वह भी उसी क्षण अपने घर में चल पड़ा।

अमरसिंह अभी दो चार ही कोस गया था कि पाछे से किसी सवार की आवाज की आहट सुनाई दी। मुड़कर देखा तो सामने आकर बाबूजी ने नमस्कार किया। राजकुमार ने कहा बल्लूसिंह तुम क्यों आए हो ?

बल्लूजी—मैंने सौगन्द खाई थी, कि विपद के समय तुम्हारा साथ दूँगा।

अमरसिंह—यह सत्य है। परन्तु मैं इस प्रतिज्ञा को आप से पूरी नहीं करवाना चाहता। राजा ने केवल ११ मनुष्यों को मेरे साथ जाने की आज्ञा दी है। मैं राज् आज्ञा के विरुद्ध कुछ नहीं करना चाहता। उचित है कि तुम लौट जाव।

बल्लू जी—वाह ! राजकुमार तुम धन्य हो। क्यों न हो, तुम सच्चे क्षत्रिय हो, राजधर्म का पालन तुम्हारे जैसे शूरवीर करते हैं। मैं किसी लालच के कारण से तुम्हारे साथ नहीं चलता। न तुमने मुझको बहकाया

है मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने वाला हूं। मेरे कारण से तुमको कोई बुरा न कहेगा। यदि तुम मुझको खुशी से आज्ञा न दोगे तो मैं किसी और प्रकार से तुम्हारे साथ चलूँगा। मैं भी अपनी धुन का पक्का हूं। और जहाँ तुम्हारा पसीना गिरेगा मैं अपना लहू बहा दूँगा, मैं चाहे तुम्हारे सुख का साथी न रहूं परन्तु दुःख में अवश्य तुम्हारा साथी रहूँगा। मैं अपनी इच्छा से आपके साथ चल रहा हूं। यदि तुम अपनी तलवार से मार भी दोगे तो भी तुम्हारा साथ न छोड़ूँगा।

अमरसिंह जानता था बल्लूजी बड़े गुण का मनुष्य है। वह चुप हो गया और सब के सब चुपचाप चल पड़े। जब बहुत दूर निकल आए तो बल्लूजी ने पूछा राजकुमार! कहाँ जाने की इच्छा है।

अमरसिंह-दिल्ली जा रहा हूं।

बल्लूजी-आप राजकुमार हैं जोधपुर नरेश के प्रतिनिधि हैं इस दशा में शाहजहाँ के दरबार में जाना उचित नहीं।

राजकुमार-मैं भी यही सोच रहा हूं, परन्तु इस समय दिल्ली के सिवाय और कोई जगह दिखाई नहीं देती।

बल्लूजी ने कहा बहुत अच्छा चलिये, प्रथम तो वह स्वयं ही सुनकर बुला भेजेगा नहीं तो और सैकड़ों उपाय निकल आवेंगे। कोई न कोई राँज छीन लेंगे और उनका आपको राजा बनावेंगे।

अमरसिंह—(हँसकर) बहुत खूब मैंने भी ठान रक्खा है।

यह कहकर वह दिल्ली की ओर चल पड़े।

दिल्ली के मुगल बादशाह राजपूतों की बड़ी इज्जत किया करते थे. और इनकी कमर से आप तलवार बांधा करते थे। जब अमरसिंह दिल्ली में पहुंचा तो शाहजहाँ को भी खबर मिली। उसने तुरन्त उसको बुला भेजा, और छः गाँव की जागीर देकर अपने दरबार में रख लिया। बल्लू जी भी

दरवार से आकर इन्हीं के देखभाल में लग जाता। इसको उनकी रखवाली के लिये एक राखे की आवश्यकता हुई। उनने बिना सोचे समझे बल्लू जी को इस काम पर नियत करना चाहा, बल्लूसिंह ने कहा, राजकुमार आवश्यकता के समय मेरा सिर भी आपके लिये हाजिर हैं। और आपकी खातिर भंगी का काम भी कर सकता हूं। किन्तु मैं भी राजपूत सूर्यवंशी हूँ। विना आवश्यकता के नीच काम पर मुझे नियत न करें। अमरसिंह बोला इस समय मेरे पास तुम्हारे लिये और कोई जगह नहीं है।

जब यह बातें हो रही थीं तो दोनों घोड़ों पर सवार थे। बल्लूजी को क्रोध आ गया उसने कहा राजकुमार मैंने दुःख में तुम्हारा साथ दिया परन्तु आपके अनादर से अब जाता हूं। जब मेरे सिर और तलवार की आवश्यकता होगी तो फिर हाजिर हूँगा। अब मेरा नमस्कार है। यह कहकर घोड़े के एड़ लगाई और क्षण मात्र में कहीं का कहीं जा निकला।

दिल्ली से चलकर बल्लू जी बीकानेर पहुंचा। राजा करनसिंह उस समय सिंहासन पर था। उसने बल्लूजी की अब भक्त की और उसको अपना मंत्री बना लिया। दूसरे नौकरों को यह देखकर ईर्षा हुई। वह इस ताक में लगे कि किसी प्रकार इसको राजा की दृष्टि से गिरा देना चाहिये। एक ओर वह राजा के कान भरने लगे दूसरी ओर राजा की ओर से बल्लूसिंह का चित्त फाड़ने लगे, परन्तु कोई लाभ न हुआ, राजा ने जब परीक्षा की तो उसको सच्चा पाया। एक दिन बल्लू जी का अन्न जल उठ गया। राजा ने प्रसन्न होकर उसके पास एक फल भेजा। दो चार सरदार बल्लूजी के पास बैठे थे, वह कहने लगे कि हमारे देश का दस्तूर है कि जब राजा किसी से मन में अप्रसन्न होता है और उससे बात चीत करना नहीं चाहता तो यह फल भेज देता है ताकि वह मर्यादा के साथ राज्य से बाहिर चला जाय। यदि इस पर भी वह रहता है तो फिर अनादर करके निकाला जाता है। बल्लूजी समझदार तो था परन्तु उनके चक्र में आ गया। उसने कहा राजा साहब मुझसे अप्रसन्न हैं तो मैं एक क्षण के लिये भी यहाँ न ठहरूँगा। यह कहकर वह घोड़े पर सवार हुआ, और उदयपुर चला गया। करणसिंह को बड़ा

दुःख हुआ परन्तु कर क्या सकता था।

महाराना ने वल्लूजी का बड़ा आदर किया और अपने यहाँ रख लिया। परन्तु यहां भी सरदार उसकी प्रतिष्ठा देखकर जलने लगे। जब इनका कुछ वण न चला तो बल्लूजी को अभिमानी और घमन्डी कहकर राना से कहने लगे कि यह जोधपुरी मारवाड़ी डींग मारा करता है कि मैं सिंह से भी लड़ सकता हूं। नेकु इसकी परीक्षा कर लेनी चाहिये। महाराना ने कहा बहुत अच्छा किसी दिन मैं इसका कर्तब देखूँगा। ईर्षालू खुश हुए कि अब बल्लूसिंह मारा जायगा। जब बल्लूजी ने इस बात को सुना तो वह गर्जकर बोला "क्या परवाह है यदि महाराना मेरी बीरता का दृश्य देखना चाहते हैं तो मैं तैयार हूं, जो सिंह से डरता है वह राजपूत नहीं है" सरदारों ने यह बात राना जी को सुनाई।

दूसरे दिन राना सरदारों के साथ जंगल में गया। बल्लू जी के नेत्र अंगारे की तरह लाल थे। तलवार हाथ में कौंध रही थी। उसने कहा सिंह कहां है मेरे सामने आवे। उदयपुरी सरदार तो वृक्षों पर चढ़ गये। वनरखों ने सिंह का हंकवा किया बाजों का शब्द सुनकर सिंह झाड़ी से बाहर निकला। अभी वह इधर उधर ताक ही रहा था कि बल्लूजी ने ललकारा "क्या देखता है यदि साहस है तो आ मेरा सामना कर" शेर गर्जकर बिजली की तरह टूट पड़ा। बल्लूजी पहले ही से तैयार था, आते ही ऐसी तलवार मारी कि एक ही वार में उसका सिर कटकर दूर जा पड़ा। इस असाधारण वीरता को देखकर सब दंग रह गये। महाराना पास आकर कहने लगा क्षत्रिय तू धन्य है, बीरता का आदर्श है। इसके बदले में मैं तुमको जागीर देता हूं। सरदार यह देखकर पश्चाताप करने लगे। बल्लूजी ने राना से कहा आपको इस परीक्षा से क्या लाभ हुआ, आपको मेरे जैसे मनुष्यों को आवश्यक समय के लिए रख छोड़ना चाहिए ऐसे-२ खेल तमाशों में नष्ट न करना चाहिए।

राना उसकी बात का कुछ उत्तर न दे सका, केवल उसका मुख ताकता रह गया। इस बात से बल्लूजी ने यह समझा कि राना मुझसे अप्रसन्न है।

इसलिए वह दिल्ली चला आया। बल्लूजी की वीरता का हाल शाहजहां तक पहुंच चुका था, उसने आते ही इसे पाँच सौ सवारों का सेनापति नियत कर दिया। और बल्लू जी वहां रहने लगे।

बल्लूजी के चले आने पर महाराना को शोक हुआ, कुछ दिनों में एक सौदागर राना के पास घोड़ा बेचने लाया, घोड़ा बड़ा विचित्र था, राना ने पूछा इस पर कौन चढ़ेगा ? सबके मुख से निकला इस पर बल्लूजी चम्पावत चढ़ सकते हैं। राना ने उसी क्षण अपना दूत दिल्ली भेजा ताकि घोड़ा बल्लूजी के अर्पण किया जाय।

बल्लूजी के थोड़े दिनों तक दिल्ली में रहने के पीछे शाहजहां को आगरा में रहने का चाव हुआ। उसी समय बीकानेर के राजा से और अमरसिंह का झगड़ा हो पड़ा। बादशाह ने इस झगड़े को मिटाने के लिए सलामत खान को सरपंच नियत किया, सलामत खां ईमानू था, उसने अमरसिंह के विरुद्ध अनुचित रूप से फैसला दिया। और परस्पर कुछ बातचीत भी हुई जिसमें सलामत ने दुर्वचन कहे। उनके उत्तर में अमरसिंह की तलवार म्यान से निकल पड़ी और सलामत खां के दो टुकड़े हो गये। इस पर शाही मनुष्यों ने अमरसिंह पर आक्रमण किया, अमरसिंह भी क्रोध से अन्ध होकर दुहत्थों तलवार मांजने लगा, और दम के दम में हजारों मनुष्यों को काटकर पृथ्वी पर गिरा दिया, बादशाह तख्त से भाग कर भीतर जा छिपा, अमरसिंह हजारों की भीड़ काटता छांटता फाटक की ओर चढ़ा, किसी को उसके समीप जाने का साहस नहीं हुआ। जब फाटक के पास पहुँचा तो अर्जुन गौड़ नामक उसका राजा मिला, उसने पहले तो अमरसिंह की वीरता की प्रशंसा की और जब उसको गाफिल देखा तो पीछे से उसके पेट में कटार भोंक दी जब वह घायल हो गया तो हजारों मनुष्य टूट पड़े और उसको टुकड़े-२ कर डाला। लोभ बुरा होता है अपने बेगाने बन जाते हैं।

अमरसिंह की लोथ किले के बीज में डाल दी गई ताकि उसकी दुर्दशा देखकर दूसरों को भय हो। कहते हैं कि बादशाह ने यह आज्ञा दे रक्खी थी कि इस लोथ को कोई न उठावे।

अमरसिंह की रानी को जो दुःख हुआ वह अवर्णनीय है। बेचारी को सती होने के लिए पति की लोथ तक न मिली। उसने अपने सरदार बीरभान जी को बुलाकर कहा, "वीरभान ! स्वामी चल बसे मैं भी उनके पास जाने को तैयार हूं। यदि तुमसे हो सके तो उनकी लोथ लादो"। वीरभान शूरमा था उसने अपने साथी पांच सो राजपूतों को जो मरने मारने के लिए उद्यत किया, फिर बल्लूजी को कहला भेजा "मित्र अमर सिंह मारा गया तुमने प्रतिज्ञा की थी, कि तुम उसके दुख में साथ रहोगे, अब समय आगया है कि तुम मृत्यु में उसका साथ दो, मैं तैयार हूं। रानी सती हुआ चाहती है, लोथ किले मैं पड़ी हैं, कहो क्या कहते हो ? यदि साथ देना हो, तो शीघ्र आओ।

वीरभानु ने बल्लू जी को इस प्रकार का पत्र लिखा, जिस समय बल्लू जी को यह पत्र मिला, उसने तुरन्त शिव भगवान् को नमस्कान किया, मस्तक पर दही चावल का तिलक लगाया, तलवार उठाली ढाल बांध ली, साथी राजपूत उसकी इच्छा को जानते थे, सब घोड़ों पर सवार हुए, बल्लू जी ने घोड़ा मंगाया, उसी क्षण उदयपुर के राजा का भेजा हुआ घोड़ा भी बल्लू जी के पास पहुंचा, दूत ने नमस्कार करके घोड़ा और पत्र दिया। बल्लू जी ने मुस्कराकर कहा चलो शकुन अच्छा हुआ और उसी घोड़े पर सवार हो गया और दूत से कहा "राना जी को मेरा नमस्कार कहना मैं आज ही इस घोड़े पर चढ कर इस प्रकार का काम करुंगा कि लोग देखकर दङ्ग रह जायंगे। यह घोड़ा मेरे लिए इन्द्र का विमान है।

बल्लू जी वीरभानु के पास आए और उनसे कहा कि हम तुम किला की ओर चलें और इधर चिता तैयार करदी जाय ताकि ज्यों लोथ आवे त्यों ही रानी सती हो जाय। तुम लड़ने और लोथ लाने का काम करो और मैं रानी की रक्षा करुंगा।

पांच सौ राजपूत वीरभानु के साथ हुये और पांच सो बल्लू जी के साथ थे।

किले में चौकी पहरा का प्रबन्ध अच्छा नहीं था, शाहजहां का ऐश्वर्य्य

उन्नति पर था, किसी को सन्देह तक नहीं था कि इक्के दुक्के राजपूत किले में घुस आवेंगे। बल्लू जी फाटक पर जा पहुंचा पहरे के सन्तरी ने रोका, उसको बल्लू जी ने तलवार पर रख लिया, बस फिर क्या था बाकी के पहरे वाले भाग गए, बल्लू अपने साथियों समेत किले के चौक में पहुंचा। लोथ दुर्दशा की अवस्था में पड़ी थी। इसने उसके टुकड़ों को इकट्ठा किया, फिर नेत्रों में जल भरकर नमस्कार किया और कहा जो यश रघु और दधीची व राम को मिला है वही तुझ को भी प्राप्त हो। तू अकेले स्वर्ग को जा रहा है मैं भी तेरे साथ २ आता हूं। जिस बल्लू ने दुःख में तेरे साथ रहने की प्रतिज्ञा की थी वह मृत्यु में भी तेरा साथ देगा।

यह कह कर लोथ को बांधकर अपने मनुष्यों को सौंप दिया, एक हजार शूरमा राजपूत कम नहीं होते। बात की बात में लोथ चिता तक पहुंचा दी गई। ब्राह्मण कर्मकाण्ड करने लगे रानी लोथ को गोद में लेकर चिता पर बैठ गई। वीरभानु ने झट पट अग्नि दे दी, रानी आनन्द से ईश्वर की स्तुति कर रही है और सब शूरमाओं को आशीर्वाद दे रही है। उधर बल्लू सिंह अमर सिंह का बदला लेने की तैयारी कर रहा है किला वाले खूब सम्भल कर और कई हजार सेना लेकर लड़ने आए, इसने ललकार कर कहा लोथ तो चिता पर जल रही है हमारी प्रतिज्ञा पूरी हो चुकी है अब जिस की मरने की इच्छा हो वह मेरे सन्मुख आये। पहले तो सब डरे परन्तु बादशाह के भय से आगे बढे राजपूत बहुत थोड़े थे परन्तु ऐसा संग्राम मचा कि जिस की कोई सीमा नहीं। फिर बल्लू ने कहा राजपूतो! लड़ते हुए चिता की ओर चलो ताकि यवन उसे बुझा न सकें और हम अन्तिम बार चिता को नमस्कार कर सकें। यह कहकर वह यवन सेना को काटता छांटता चिता की ओर बढ़ा। वीरभानु लड़ रहा था. बल्लू जी ने कहा राजपूत तू धन्य है। फिर दोनों ने चिता की ओर देखा, रानी धैर्य के साथ बैठी हुई जल रही थी। ब्राह्मण जय जय कार कर रहे थे। दोनों ने फिर अन्तिम बार चिता को नमस्कार किया और शत्रुओं पर पिल पड़े और वह संग्राम मचाया कि जिस का वर्णन नहीं हो सकता। राजपूत एक ओर चिता को

देखने जाते थे कि वह जल रहा है या नहीं और फिर शत्रुओं को मारते हुए आप भी कट २ कर मर रहे थे। हजार मनुष्यों में से एक भी नहीं बचा सब के सब जूझ गए, बल्लू ओर वीरभानु शत्रुओं को मारते २ थक गए थे, अन्त में वह भी घायल हुए और एक साथ धरती पर गिरे। बल्लू ने कहा शोक ! कि मैं चिता जलने से पहले मर रहा हूं, पुरोहित ने उनकी बात सुन ली वह जोर से चिल्ला कर बोला "कुछ चिन्ता न करो, रानी और राजा दोनों की लोथ भस्म होगई तुम्हारा काम पूरा होगया। पुरोहित का शब्द सुन कर शत्रुओं ने उसको भी वहीं काट डाला, चिता अब राख का ढेर थी, अब हिन्दुओं में से कोई भी नहीं रहा था। सब स्वामी भक्ति की वेदी पर बलिदान होगए, और अपने पीछे अमर कीर्ति छोड गए।

दोहाः— रहे न अर्जुन भीम जग, रहे न कृष्ण मुरारि।
अचल कीर्ति रह गई, कह देव कवि गिरधार॥

यह सब लोग मोक्ष जीव थे, सब ने अपने जीवन का आदर्श पूरा कर लिया। यह बल्लू जी चम्पावत का संक्षिप्त वृतान्त है।

× = ×

वैसाखी ८३ के शुभ औसर पर

द्वारा

आचार्य कृष्ण मोहन श्रीवास्तव "फकीर सत्संग केन्द्र"
मिश्रित तीर्थ जिला —सीतापुर

"ख्याल"

एक दिन देखा था मैंने हाट में बहुरूपिया,
रूप बहु तेरे बनाकर आता था बहुरूपिया।
वह कभी साधू कभी मजनूं बना बहुरूपिया,
वह कभी पंडित कभी ग्वालिन बना बहुरूपिया॥

देखकर सब दंग थे बहु रूप था बहुरूपिया,
खुद को जाहिर करने को फनकार था बहुरूपिया।
सोचने को मैं विवश हूं क्या है यह बहुरूपिया,
आया अन्दर से यह उत्तर सब जगत बहुरुपिया ॥
जीव बनकर आप आता गर्भ में बहुरूपिया,
बहुरुपिया की आप खुद है पालता बहुरूपिया।
बाप, बाबा, बेटा, पोता है सभी बहुरूपिया,
माता, दादी, बेटी, पोती सब हैं यों बहुरूपिया ॥
दोस्त, दुश्मन, चोर, हाकिम सब ही है बहुरूपिया,
क्या गुरू, चेला, भगत भगवान भी बहुरूपिया।
जिस तरफ डाली नज़र हरसिमत है बहुरूपिया,
जड़ चेतन जग जीव सारे हैं भई बहुरूपिया ॥
जात मुल्क जिस्म रखकर आया थाबहुरूपिया,
थी मस्त राम के घर मैं आकर खेला था बहुरूपिया।
भूले भटकों को चेताता था सदा बहुरूपिया,
अपना अनुभव जाहिर करता था यहां बहुरूपिया ॥
मानवता की नींव रखने आया था बहुरूपिया,
मानवता झंडा ऊँचा कर गया बहुरूपिया।
था फकीरों में फकीर एक नामवर बहुरूपिया,
बात अति झीनी मेरी है समझो यों बहुरूपिया ॥
वक्त गुरू के पास जाओ सूझे फिर बहुरूपिया,
भेष-भूषा चेन्ज कर मसनद नशीं बहुरूपिया।
आई-सी शर्मा विराजे शक्ल है बहुरूपिया,
या कहूं फकीर भय मानव हुए बहुरूपिया ॥
टी० वी० का इस्क्रीन देखा है वही बहुरूपिया,
शब्द और प्रकाश मिलकर बन गया बहुरुपिया।

देखते ही देखते छाया हुई बहुरूपिया,
मिस्ल दुनिया दौड़ती आया नजर बहुरूपिया ।।
रूप उसका कुछ नहीं बहु रूप है बहुरूपिया,
सत्ता मालिक एक है हर कुल व जुज बहुरूपिया ।
बोलता और सुनता यारो जात है बहुरुपिया,
कृष्ण मोहन खुद को समझो तुम भी हो बहुरूपिया ।।
सबको राधास्वामी

१-फनकार = कलाकार ।
२-रूपोस = छिपा ।
३-बातिन = अन्दरुनी ।
४-मसनद = गद्दी ।
५-नशीं = बैठा ।
६-इस्क्रीन = सिनेमा का पर्दा ।
७-कुल = पूर्ण ।
८-जुज = अंश ।
९-यारो = दोस्तो ।
१०-जात = सेल्फ ।

—0—

फ़कीर चमन पत्रावली

29.

हुशियारपुर
14-11-73

प्यारे चमन जी

राधा स्वामी

मैं 21 नवम्बर को भीलवाड़ा (राजस्थान) जा रहा हूँ और 2 दिसम्बर तक वापिस आऊंगा यदि आप आना चाहो तो 16 नवम्बर के मासिक सत्संग पर आ सकते हो ।

आपका फकीर

30.

प्यारे दुर्गादास चमन

राधा स्वामी

तुम्हारे पत्र में जो शब्द लिखे हुए हैं। पढ़े साथ ही इसके तीन बच्चों का होना और आय का कम होना यह बता रहा है कि आप को अपने मन के अन्दर जो वस्तु छुपी हुई है उसका अभी पता नहीं है। भावुक मत बनो आशा वादी रहते हुए slow and study के नियम को मानते हुए चलो, मैं मार्च के पहले सप्ताह के अन्त में हुशियारपुर आ रहा हूं।

आपका फकीर

31

भूपाल

24-1-74

दुर्गादास चमन जी

राधा स्वामी

तुमने खूब पत्र लिखा, जो मनुष्य भी इस शरीर में आता है चाहे अवतार है चाहे सन्त है। कोई भी हो वह शरीर और मन में रहता हुआ किसी न किसी कमजोरी का सदैव शिकार होता रहेगा। पूर्णतः केवल प्रकाश व शब्द में रहने से होती है। तुमको विचार है पर उपकार का शुभ है मुबारिक है। मुझे भी था परन्तु अनुभव बताता है कि संसार को परमार्थ की आवश्यकता नहीं। यहतो हम लोग सब दुनियाँ के सुख-संसार की इच्छाएँ चाहते हैं और इन के बिना किसी का गुजारा भी नहीं। मैं दौरा पर हूं अधिक तुम्हारे विषय में नहीं लिख सकता। जब मिलूँगा कहूँगा-मौजा

आपका फकीर

32.

हुशियारपुर

6-2-74

प्यारे चमनजी

राधा स्वामी

अच्छा है आप 5-6 दिन यहां रहो। मुझे भी आपके दर्शन करके

खुशी होगी। बाकी पत्र का उत्तर जबानी दुँगा। इतना संकेत किए देता हूं कि जो कुछ होना है वह पहले ही प्रारब्ध में लिखा है। मैं 12, 13, 14 जुलाई को हुशियार पुर में ही रहुँगा।

आपका फकीर
हुशियार पुर
8-3-74

33.

दुर्गादास चमन

राधा स्वामी

मैं आज ही दौरा से वापिस आया हुं। तुम्हारा पत्र पढ़ा। जो मनुष्य जिस काम के लिए कुदरत ने बनाया है वह करेगा। कोई रोक नहीं सकता मेरा अनुभव यह है कि दुनिया को या मुझे या तुम्हें वास्तव में शान्ति की आवश्यकता है और शान्ति की गलत समझ हमको जुदा २ इच्छाओं में फंसाती है। मैं न गुरु हूं न महात्मा। गुरु नाम ज्ञान अनुभव का है। जो कुछ करना चाहते हो करो ओर कर जाओ।

आपका फकीर
हुशियार पुर
14-5-74

34.

चमन साहिब

राधा स्वामी

आपके पाँच रुपये मिल गए थे। और आप को रसीद भी भेज दी गई थी। बहुत २ धन्यवाद !

जब से आप ने यह गुरुआई का काम किया है और सत्संग का काम कर रहे हो कितने आदमियों को सतलोक पहुंचाया और कितने आदमियों के जीवन बदले हैं ? क्या आप भी सतलोक पहुंच गए ? सोच कर उत्तर देना। तुमको पत्र लिखवा रहा हूं। अपने आप से भी पूँछता हूं चमन जी, मुझे तो इस काम से मस्तिष्क में एक ऐसी अवस्था आ रही है जिस से दिमाग के अन्तर सतलोक क्या अनामी धाम नाम, अनाम सब गुम हो रहे हैं। अभी

होश है और लिख रहा हुँ । आज संक्रान्ति है । जेठ महीना है । जेठ महीने के शब्द का सार क्या निकला वह बताया है । किसी समय छपेगा । आपका लड़का एक दो दिन हुए मेरे घर पर मिला था इन्ट्रब्यू (interview) देने गया था ।

आपका फकीर

३४.

हुशियार पुर

30-4-74

चमन जी

राधा स्वामी ।

पत्र मिला । यदि उनका काम करने से चार पैसे मिलते हैं तो कर दो । इस संसार में बिना पैसे के गुजारा नहीं । पैसे के लिए ही सारे धर्म और कर्म है या इज्जत और मान के लिए हैं । जो इस संसार में दुःखी हैं और उनको अनुभव हो गया है कि इस सँसार में कहीं भी सुख नहीं है उनके लिए अध्यात्मवाद है । जैसे मैं हूं । वह भी तब जबकि मेरा गुजारा चल रहा है ! यदि वह लोग कुछ देते नहीं हैं तो तुम्हारी मर्जी है ।

आपका फकीर

नोट :- यहाँ यह लिख देना चाहता हूँ कि एक व्यक्ति बाइबल के कुछ भाग का पहाड़ी भाषा में अनुवाद करवाना चाहता था । उसने मुझे कई बार पूछा क्योंकि यह कार्य दूसरे धर्म का था अतः महाराज जी से पूछा गया, उन्होंने ऊपर लिखित उत्तर दिया मैंने कुछ सोच कर वह कार्य छोड़ दिया था ।

35.

होशियार पुर

25-5,74

चमन जी

राधा स्वामी ।

आप के पाँच रु० मिल गए । क्या कहुं और आपके पत्र का क्या उत्तर दूँ । अभी आपका गृहस्थ जीवन है । अन्तिम अवस्था विदेह गति है और

सतलोक जीवन मुक्ति है। कभी मिलोगे तो इस पर प्रकाश डालुंगा इतना समय नहीं कि पत्र में लिखूं। प्रारब्ध कर्म का भोग सबको भोगना पड़ता है। जीवन का अन्त क्या है। दाता का एक शब्द लिख देता हूं–

न अपना नाम रखना तुम न तुम
अपना निशां रखना।
नहीं कि जब गई आदत जुबाँ पर
फिर न हाँ रखना॥

यह पूरा शब्द किसी जगह से पढ़ लेना।

आपका फकीर।

0=0

नितानन्द शब्द व्याख्या

जग तारन आई सुखदायक गंगा।
सेवा करै सो मेवा पावे, साधन के सत्संगा
जाकी लहर लगे अघ नासै, निर्मल हो सब अंगा
राम नाम का बेड़ा बाँधो, उपजै भक्ति तरंगा
नितानन्द महबूब गुमानी, करो सकल भय भंगा।

प्रिय आत्मन बन्धुओ।

आज हजूर परमदयाल जी सन्त नितानन्द जी की वाणी ले रहे हैं। नितानन्द जी हरियाणा में हुए हैं। यह भी पूर्ण पद तक पहुंचे हैं यह इनकी वाणी स्पष्ट कर रही है। इन के गूरू गुमानी दास जी हुए। गुमानी दास जी परम सन्त दादु दयाल जी के शिष्य थे।

ऊपर के शब्द में सतसंग की महानता पर बल दिया गया है। वह कहते हैं कि सतसंग रूपी गंगा संसार को तारने के लिए आई है। एक तो श्री गंगा हरिद्वार में बह रही है किन्तु सन्त हमेशा अन्तर के अभ्यासी होते हैं उनका प्रत्येक शब्द अनुभव से भरा होता है वह कोई भी बात वैसे नहीं

करते । यहाँ भी उनका भाव सतसंग रूपी गंगा से ही है । दास ने पिछले 'मनुष्य बनो' के प्रवचन में यह लिखा था कि अगले अंक में सतसंग भाव दर्शाया जायगा, जिसे यह शब्द प्रकट कर रहा है ।

मित्रो सतसंग स्वरूप व ध्यान के लिए प्रथम अंग है । अंग ही नहीं यदि इसे सब कुछ कहा जाय तो ठीक ही होगा । कई जिज्ञासु सतसंग सुनकर ही परम पद प्राप्त कर लेते हैं । अतः सतसंग की महानता है । अगली पंक्ति में वह कहते हैं कि जो अहंकार को छोड़कर सेवा करता है वह पूर्ण फल पाता है । सेवा भी तीन प्रकार की है । शरीर द्वारा सेवा, इस सेवा से मन निर्मल होता है । इसीलिए सतसंग के उपनान्त भन्डारा आदि का प्रयोजन किया जाता है । इस से मन पर चोट पड़ती रहती है और वह निर्मल होता रहता है । गुरू आप भी लंगर की सेवा अपने 2 ढंग से करते रहते हैं । दूसरी सेवा सूक्ष्म है । अभ्यास करने से नूरी दर्शन होते हैं । यह अन्दर की सेवा है । तीसरी सेवा कारण है । यह सार शब्द का सुनना है । इसके सुनने से पूर्ण ज्ञान पैदा होता है और सम अवस्था प्राप्त होती है । फिर कुछ भी करना धरना नहीं होता प्रखण्ड समाधी का क्रम चलता है । सब कुछ प्रारब्ध वश होता है । बन्धन नहीं रहता । यह भी वह कह रहे हैं कि–

जाकी लहर लगै प्रिय नासे, निर्मल हो सब अंगा

कहते हैं कि सतसंग रूपी गंगा की लहरों से शरीर का एक 2 अंग निर्मल हो जाता है । यह तभी होगा जब सतसंग के वचनों पर पूरा 2 अमल होगा । आगे कहते हैं:-

राम नाम का बेड़ा बाँधो, उपजै भक्ति तरंगा ।

हो सकता है उन्हें राम नाम की शिक्षा मिली हो । गुरू पूर्ण होता है वह शिष्य को जो भी दीक्षा (गूरू मन्त्र) देता है । शिष्य उसका ठीक उपयोग करने से आगे जाता है । परमदयाल जी कहते थे कि इस चक्कर में नहीं पडना चाहिए कि क्या मन्त्र दिया गया है । किसी को गुरू पाँच नाम कोई राधा स्वामी कोई राम नाम की दीक्षा देता हैं । इस वहम में नहीं पड़ना चाहिए । गुरू का सतसंग बार बार सुनना चाहिए और भेद लेकर

वैसा कार्य करना चाहिए । तभी लाभ हो सकता है ।

वह कहते हैं कि नाम रूपी मंत्र का बेड़ा बनाओ । मित्रो जब तक कोई भी मनुष्य नदी पार करने के लिए परिश्रम द्वारा बेड़ा न बनाए वह पार नहीं जा सकता, उसी प्रकार जब तक गुरू दीक्षा को सिमरण, ध्यान और भजन की कसौटी पर नहीं कसा जायगा पूर्ण भक्ति नहीं होगी । आगे कहते हैं कि :-

'नितानन्द महबूब गुमानी, करो सकल भय भंगा

नितानन्द जी कहते हैं कि गुरू गुमानी दास जी के सतसंग द्वारा उन्होंने यह सब प्राप्त किया और सब डर चले गये ।

परम दयाल जी भी यही कहते थे कि सतसंग में ही सब कुछ प्राप्त हो जाता है । शर्त यह है कि गुरू भी पूर्ण हो और शिष्य भी इच्छुक हो ।

राधा स्वामी

—:000:—

(गतांग से आगे)

गुरू का रूप और रहनी

वह गुरू जो तुमको शिक्षा देता है वह क्या है ? आदि अनादि जुगादि । वह तत्व रूप है । उसकी रहनी क्या है ? मुझे पता नहीं कि स्वामी जी कहां रहते थे अथवा कबीर कहां रहते थे ? मेरे अनुभव ने मुझे जहां रहने ठहरने को विवश किया वह कहता हूं । जब मैं अकेला होता हूँ, दादयाल का बाहरी रूप मेरे सामने नहीं रहता क्योंकि जब मैं दूसरों के अन्दर नहीं जाता तो फिर कौन दाता दयाल अन्दर आयगा । श्री आनन्द राव की ओर संकेत करके कहा कि मेरी बात को समझो । मैं तुमको सन्त बना देना चाहता हूं)

सहसदल कँवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न, भँवरगुफा सब माया की

श्रेणियां थीं जहां मैं अभ्यास करता था। अपनी कल्पना से रूप बनाता था, चाहे किसी का रुप बना लूँ। तो अपने थूके को कौन चाटे! फिर मैं कहां रहने को विवश हुआ? यहाँ न यादे खुदा, न यादे दयाल न यादे ईश्वर। मैं पथ भ्रष्ट नहीं हुं। मैं यहां रहने को विवश हो गया। राधास्वामी दयाल की वाणी इसका प्रमाण है। लिखा है—

राम रहीम करीम न केशी ।
कुछ नहिं कुछ नहिं था सो ॥
स्मृति शास्त्र न गीता भागवत ।
कथा पूरान न वक्ता कीरत ॥
सेवक सेव न दास न स्वामी ।
नहिं सत नाम न नाम अनामी ॥
....'.....

मैं उस अवस्था में रहने को विवश होता हूँ। आप लोगों ने मुझको माया देश से निकाला। मेरे साथ अनजाने (unconciously) गुरू का काम किया। मैं तुमको ज्ञान देना चाहता हूँ कि तुम भी स्वतन्त्र हो जाओ अर्थात् काल और माया के चक्र से निकल जाओ।

जो व्यक्ति धन, धरती और स्त्री से सम्बन्ध रखता है या उनमें आसक्ति रखता है वह अधिकारी नहीं अर्थात वह काल और माया के चक्र से नहीं निकल सकता। इसका अर्थ यह नहीं कि तुम इनका त्याग करदो और छोड़ जाओ। नहीं, इनके रूप को समझो और इनमें आसक्ति न रक्खो। मैं सचाई वर्णन करता हुं। क्यों? इसलिये कि महात्मा कहलाने वाले लोग धर्म की आड़ में तुमको अपनी बार बिरदारी का जानवर बनाकर लूट न लें। दूसरे यह कि जगत का कल्याण हो जाय।

जिस गनेशचन्द्र का मैंने पहिले वर्णन किया है उससे मैं चाहता तो जितना चाहे धन ले लेता मगर मैं अपराधी होता। मैं इसी कारण डेरा धाम के जाल में नहीं फँसा। यह संसार लुट रहा है। इन धर्म के पुजारियों ने फांसने का जाल बिछाया हुआ है। इस लूट के विषय पर दाता दयाल महर्षि

शिव का एक शब्द है—

जगत में कैसी लूट पड़ी ।। टेक ।।
माता कहे पूत है मेरा, भाई भाई बनावे ।
घर की तिरिया तन से लिपटी, पति कह रुदन मचावे ।।
बहिन बीर कह हँस मुसकावे, मुसके धन ले जावे ।
पुत्र बहू कहे ससुर सयाना, झूठे भाव दिखावे ।। जगत०
राजा कहे मेरी है परजा, करे कमाई उद्यम ।
मक्खन काढ़ मुझे दे उत्तम, पिये छाछ नित मध्यम ।। जगत०
पण्डित दान दक्षिणा मांगे, साधू भिक्षा धारी ।
तीरथ मठ मूरत और मन्दिर, लूटे लूट की बारी ।। जगत०
मरते समय आग यह बोली, इसे जला खाजऊँ ।
मिट्टी कहे गाढ़ दे मुझमें, अपना बस बनाऊँ ।। जगत०
हवा सुखावै पानी घुलावे, सिमटावे आकाशा ।
चकित हुआ यह देख के लीला, लूट का अजब तमाशा ।।जगत०
मैं हूँ कौन कौन है मेरा, इसकी समझ न पाई ।
देख लूट का जग विस्तारा, लूट हुई दुखदाई ।। जगत०
कभी कभी भूल भरम में फँसकर, आप लूट लुटवाऊँ ।
लूट लूट के लुट गया सारा, लूट का मरम न पाऊँ ।। जगत०
राधा स्वामी की संगत पाई, समझ लूट की आई ।। जगत०
व्याकुल चित चरणों में आया, ली सतगुरु शरनाई ।।

(इसके पश्चात बन्दना की आगे की कड़ी पढ़ी गई)

बारम्बार करूँ परनाम । सतगुरु पदम धाम सतनाम ।।

जो सन्त निजस्वरूप (जात) में रहता है तो जो मनुष्य उसका दर्शन करेगा अथवा उसका ध्यान करेगा उसके गुण उसके अन्दर आ जायेंगे । पदम धाम क्या है ? पदम एक फूल है जो पानी में रहता है मगर पानी चाहे कितना ही हो जाय उसमें डूबता नहीं । सदा पानी से ऊपर रहता है । मैं अपने आप में रहता हूं । मुझे किसी से आसक्ति (attachment) नहीं ।

इस लिए मैं पदम हो गया। वह पदम धाम का भाव है।

दो साल हुये मैं राधास्वामी धाम गया था। जब लौटने पर इलाहाबाद आया तो एक व्यक्ति हजारीसिंह (फौज का आदमी) मुझे वहाँ मिला। उसने बताया कि मैं अभ्यास के समय देखा करता हूं। कि आप पदम के फल पर बैठकर भाषण देते रहते हैं। वास्तव में वह पदम नहीं था। उसने पदम का शब्द सुना होगा। उसके ख्याल ने ही पदम का रुप बना दिया और उस पर मुझे बिठा दिया। सत्संगियों को मुद्दत होगई मगर रहस्य या भेद का पता नहीं लगा।

यदि मेरी संगत में रहने वाला बे-गम, बेफिक्र और निर्भय नहीं होता तो मैं पदम धाम का वासी नहीं। मगर शर्त यह है कि मेरी संगत में रहने वाला बेगम, बेफिक्र और निर्भय रहना चाहता भी है या नहीं। यदि नहीं चाहता तो उसे कोई लाभ नहीं हो सकता। मेरी स्त्री ने मेरी जितनी रेडीयेशन ली है उतनी शायद ही किसी ने ली हो, क्योंकि वह सबसे अधिक मेरे पास रही है मगर उसकी मेर तेर नहीं गई सोचो! मैं क्या कर रहा हूँ? बात बिल्कुल स्पष्ट है। एक सुन्दर स्त्री है। छोटा बच्चा उसे देखता है। मगरकामातुर नहीं होता। क्यों? क्योंकि उसमें काम की भावना नहीं है। या इच्छा नहीं है मगर नौजवान यदि उसको देखता है तो उसके अन्दर जज्वा (कामेक्षा) पैदा हो जाता है क्यों कि उसमें कामाँग की पूर्ती का सामान है। जब वह उससे बात करेगा तो उसमें काम भोग की वासना उत्पन्न होगी। इसी प्रकार दुखी प्राणी जो सत्पुरुष का दर्शन करते और उसे का ध्यान करते हैं उनमें शांति आ जाती है। इसीलिये मैं कह देता हूँ कि मेरा ध्यान कर लिया करो। इससे वे शांति को प्राप्त कर लेते हैं। यह नहीं कि मैं उनको शांति देता हुं। दाता दयाल (महर्षि शिव) के अन्तिम शब्द थे, 'ले जाओ! ले जाओ! गंगा बह रही है'। उस समय यह बात समझ में नहीं आती थी। पिछले महापुरुषों ने समय के अनुसार बात को गुप्त रक्खा। किसी की समझ में आ गया। मैं डंडे मार हूँ। खुले रुप से प्रगट कर रहा हूं क्योंकि सैन बैन को दुनियाँ नही समझती। मैं स्वयं भी न समझ

मका । स्पष्ट रूप से वर्णन करने से दो लाभ होंगे । वे लोग जिनको जिज्ञासा है, मेरी बात को सुनेंगे और लाभ उठायेंगे । दूसरे जिनको आवश्यकता नहीं है वे नहीं सुनेंगे । पिछले संत अपने आप में कोई ऐब लगा लिया करते थे जिस से अनाधिकारी उनके पास न जाय । मैंने अपने में यह ऐब लगाया हुआ है कि स्पष्ट वर्णन करता हूं । इसके कारण दूसरे मेरे पास आ ही नहीं सकते । ऐसे पुरुष के सत्संग प्रसाद और रेडियेशन से लाभ होना जरूरी है । एक इन्फ्ल्यूऐंजा का रोगी बाजार में होकर जा रहा है । उसके कीटाणु रोग फैलाते रहते हैं । इसी प्रकार पदम धाम का वासी संत जहाँ जहां होकर गुजर जाता है बहाँ वहां उसकी रेडियेशन फैलती है । इसी प्रकार हैजे के कीटाणु जाने या अनजाने रोग फैलाते हैं किन्तु प्रकृति समता (Balance) करती रहती है । दुनियाँ में सतों का प्रगट होना इसीलिये होता है कि वह समता (Balance) लाते रहते है । प्रकृति ने जहाँ सांप पैदा किये हैं वहाँ बूटी भी पैदा कर दी है ताकि समता बनी रहे ।

कई संत ऐसे भी होते हैं जो मौन रहते हैं । ऐसे संतों की रेडीयेशन अधिक काम करती है । यदि प्रकृति में समता में लाने वाला प्रबन्ध न हो तो दुनियाँ कायम नहीं रह सकती ।

ऐसे (पदम धाम के वासी) ही सन्तों की वन्दना की गई है ।

आदि अनादि जुगादि अनाम ।
संत स्वरूप छोड़ निज धाम ॥

मैं बड़ा अशांत था । शारीरिक दृष्टि से मैं पंजाब का निवासी था और दाता दयाल (महर्षि शिव) बनारस जिले के थे । मैं उनको जानता नहीं था । और लोग भी उनको सन् १९०५ ई० में बहुत कम जानते थे, मगर मेरे आने से पहले ही प्रकृति ने उनको पैदा किया हुआ था, जैसे बच्चे के आने से पहिले ही माँ के स्तन बढ़ जाते हैं ।

उनके चरणों में जाने से पहिले दस मास तक बराबर पत्र लिखता रहा मगर कोई उत्तर नहीं मिला । आज मैं यदि किसी की चिट्ठी का उत्तर नहीं देता तो शिकायत करता है मानो कि मैं उसका नौकर हुँ । ४८ लिफाफों में

उनको चिट्ठियां भेजीं तब उत्तर मिला। लिखा कि मैंने राधास्वामी मत की हुजूर मौल्ला राय साहब से सचाई प्राप्त की है। यदि इस मत पर चलने से इन्कार न हो तो लाहौर में मुझसे मिल सकते हो।

उस समय मैंने राधा स्वामी का अर्थ क्या समझा। राधा का अर्थ राधा और स्वामी का अर्थ कृष्ण। समझा कि ऐसा कोई मत होगा। वहाँ मुझे 'सार वचन पद्य' नामी पुस्तक पढ़ने को मिली। उसमें माया संवाद पढ़ा। दुखी हुआ। कहा कि फकीर समय आयेगा जब इसे समझोगे। फिर कबीर शब्दावली और हुजूर महाराज का जीवन चरित्र पढ़ने को दिया।

आज मैं साहस के साथ कहता हूँ कि जो कुछ 'सार वचन' में स्वामीजी ने लिखा है वह अक्षरसः सत्य है।

कड़ी—आये भजवल नाव लगाई। हमसे जीवन लिया चढ़ाई॥

मैंने दाता दयाल से अत्यन्त प्रेम किया। कर्म, धर्म, प्रेम, भक्ति से मुझे शांति नहीं मिली क्यों कि मेरा द्वैत नहीं गया। दाता दयाल जब अकेले बैठते मुझसे कहते कि फकीर अभी काल और माया से नहीं निकला। एक बार जब मैं राधास्वामी धाम में था आप टट्टी गये मैं साथ में था। वहाँ निवृत होकर एक पत्थर पर बैठ गये। कहा—फकीर! एक ख्याल ले लिया और उसमें बह गया। मेरी आज्ञा मानो' वह चक्र या ख्याल जिसमें बहता था, वह था भक्ति का। कौनसी भक्ति? वह भक्ति जो मैं किया करता था। भक्ति मैं अब भी करता हूँ मगर उस समय की भक्ति और आज की भक्ति में अन्तर है। उस समय बाह्य शरीर की भक्ति थी और अब अपनी जात (निज स्वरूप) की भक्ति करता हूँ।

दातादयाल ने सुरत शब्द योग बताया था। उस योग का पहिला अंग है किसी बाहरी पूर्ण पुरुष का वचन। सत्संग में बैठ कर उसके वचन को सुनना और मनन करना है। जब तक उसके बचन को सुनकर मनन और निधिध्यासन नहीं करते, वृत्ति अन्तर की ओर जा ही नहीं सकती। मैं शब्द कह रहा हूँ। उसके ध्यान पूर्वक सुनने और मनन करने से तुम्हारी बुद्धि निश्चयात्मक होती जायगी। गुरू दया क्या है? दाता दयाल का एक शब्द

मेरे नाम इस विषय पर है—

जब दया गुरु की हुई, चरणों की भक्ति मिल गई ।
सब निबलता मिट गई, निश्चय की शक्ति मिल गई ॥
आ गये सत्संग में, और संग सत का हो गया ।
दुरमती जाती रही, जब गुरु के मत का हो गया ॥
प्रेम का प्याला पिया, पीते ही मतवाला बना ।
मन की सुधि बुधि खो गई, भोला बना भाला बना ॥
पांव में मस्तक नवाया, चित से धारा गुरु का रंग ।
कीट जिसको पहिले सब, कहते थे अब ठहरा भिरंग ॥
आप में आपा लखा, आपे में आपा ज्ञान था ।
भरम से भटका हुआ, भूला था और अज्ञान था ॥
शब्द के सुनते ही अन्तर में, जो वृत्ति सो गई ।
छिन में पल में वासना, माया की सारी खो गई ॥
राधास्वामी राधास्वामी, राधास्वामी राग की ।
गा रहा हूँ धन्य मैं कहता हूँ, अपने भाग को ॥

फिर गुरू दया क्या है ? वह भ्रमों को दूर करना है । पहिले सुरत शब्द बाहर है । सत्संग में बैठकर यदि जिज्ञासु शंका दूर नहीं करता तो मन की वृत्ति अन्तर मे ठहरेगी नहीं । वह भटकती रहेगी । मैं सहसदल कँवल, त्रिकुटी सुन्न, महासुन्न, आदि में भटकता रहा ।

सहसदल कँवल क्या है ? तुम्हारे अनेक प्रकार के विचार, ख्याल उठते रहने की अवस्था ;

त्रिकुटी—वृत्ति सब ओर से हटकर एक रूप या इष्ट का सहारा लेती है । एक तुम, दूसरा तुम्हारा आदर्श या इष्ट और तीसरा तुम्हारी लगन । यह त्रिकुटी है ।

सुन्न – जब अन्तर में मिलने की कोशिश करते जाते हो सुन्न हो जाते हो और आनन्द मिलता है । आगे मिसाल से समझो । मिसाल गंदी है मगर समझाने की दृष्टि से विवशता है । तुम सजधज के साथ विवाह करते हो ।

बहू लाते हो। तुम दोनों अकेले रह जाते हो। मिलाप हो जाता है। आने को भूल जाते हो। यह महासुन्न की अवस्था का अभिप्राय है। दुनियाँ के काम में यदि रूप नहीं बनाओगे और उसमें लय नहीं होगे; सफलता नहीं होगी। यही दशा परमार्थ की है।

जब यह भ्रम चले जाते हैं तो आगे का मार्ग सुगम हो जाता है। दसवें द्वार (सुन्न) तक मन का सम्बन्ध है। यह दसवां द्वार पूर्ण गुरू के सत्संग में ही पूरा हो जाता है बशर्ते कि बचनों को ध्यान से सुना जाय। बाहरी गुरु के वचन की धार उस अवस्था में (सुन्न) मे ले जायगी। उसके आगे समझ आ जाती है। वह समझ या ज्ञान अपने सत रूप में ले जायगा। उसका अस्तित्व है। वह तुम्हारा अपना नाम है। राधास्वामी का वचन है—यही नाम निज नाम है'।

नाम तुम्हारे अपने पास है। अधिकारी होने पर स्वयं प्रगट होगा। यह चौथे पद में है। कहा है

नाम रहे चौथे पद मांहीं। यह ढूढें त्रिलोकी माँही ॥

जब सत्संग से मन शुद्ध होगा वह अपने आपे में ठहरेगा।

भक्ति सुनाई सब से न्यारी ॥
बेद कतेब न ताहि विचारी ॥

भक्ति कहते हैं सहारा लेने को। स्वामी जी का इससे क्या भाव था पता नहीं। मेरा जो भाव है वह यह है। मेरे अन्दर ध्वनि गूँजती रहती है। मैं उसका सहारा लेता हूँ। अपने अन्दर अपने निज स्वरूप का (अपने आपका) सहारा लेना भक्ति है।

मैंने क्या समझा ? यह कि अब मैं अपने आप में रहता हूँ। मेरे अपने का अस्तित्व है, वह सत की अवस्था है।

शब्द दृढ़ाया सुरत बताई।
करम भरम से लिया बचाई ॥

राधास्वामी मत की शिक्षा है सुरत दृढ़ाई, शब्द बताया। बात समझा दी गई। जो साधन करेगा तो साधन करने पर ध्याता, ध्यान और ध्यानी

समाप्त हो जायेंगे। फिर वहाँ कहाँ ठहरेगा ?

सत पुरुष चौथे पद वासा।
सन्तन का वहाँ सदा विलासा ॥

वह सतपुरुष क्या है ? तुम्हारा अपना ही आपा है। मरने पर कहाँ जाऊँगा नहीं मालुम। मालिक तौफीक दे कि यह बता जाऊँ कि मरने के बाद क्या होता है। मैं अनुमान से कह सकता हूँ कि मरने के बाद क्या होता है मगर कोई प्रमाण नहीं। मेरा स्वरूप है प्रकाश। तुम आप उस समय तक सतनामी हो जब तक तुम वहाँ ठहरे हुये हो। मगर जब जीव दशा में हो तो ऐसा कहना गलती है। यह वाचक ज्ञान है।

जो घर दर्शाया गुरू पूरे।
बीन बजे जहँ अचरज तूरे ॥

मेरे गुरू ने जो पूर्ण थे मेरी प्रकृति को देखकर मुझको विशेष आज्ञा दी थी। हर एक के लिये अलग अलग तरीका है, एक ही रास्ता नहीं। किसी की किसी तरह की प्रकृति है। कोई किसी भ्रम में है। इसलिए राधास्वामी मत में केवल गुरु आज्ञा मानना है।

(सेठ चन्द्रकान्ता की ओर इशारा करते हुये कहा) क्या तुम मुझे हुक्म देने आये हो कि ऐसा करो ऐसा करो या मानने आये हो ! मैं जाता हूँ कि वह प्रेम का भाव है। मैं इस भाव का निरादर नहीं करता। बच्चा अज्ञानी है। माँ से लड़ता भी है। मुझे ऐसे दीवानों से प्रेम है।

हर एक के सुधार का तरीका गुरु बहतर जानता है। मेरा बचन समझदारों के लिये है। आप लोगों के लिये नहीं। हर जीव के कर्म काटने पड़ते हैं। किसी के किसी तरह किसी के किसी तरह। साधारण बुद्धि वाला इस को शीघ्र ग्रहण कर लेता है और क्यों ? क्या ? कैसे ? करने वालों को समय लगता है। इस लिये गुरु के पास जाओ। उसका हुक्म मानो।

परेशानियों और दुविधा में आये हुओं को सन्तों का सत्संग है। तरह २ के विचारों का भर जाना ही गंदगी है। सन्तों का प्राकट्य भ्रम जैसों को होता है जिनकी बुद्धि खराद पर चढ़ी हुई है। मैं शंकायें पेश करता। यह

कैसे ? वह कैसे ? वह सब शंकायें आप लोगों के अनुभवों ने स...
करदीं।

जब हम कोई वस्तु बनाते हैं तो उसके कायम रखने को रुपये वालों के आश्रित हो जाते हैं। कोई आश्रम बनाता है तो क्या उसके चलाने को हम दूसरों के मुहताज न होंगे। मुहताजगी के बिना गुजारा नहीं। मुहताजगी तो सहनी पड़ेगी। जब मैं डेरा धाम के चक्कर में नहीं आया तो मैं रोचक बातों से किसी को अपने पीछे नहीं लगाता।

यह डेरा हनमकुण्डा में बना है। मैं इसे बनाना चाहता हूँ मगर सचाई के साथ समझ बूझ के साथ। कोई अज्ञान से पैसा न दे। देखना चाहता हूं कि सचाई और समझ बूझ से काम करने में सफल होते हैं या नहीं। तब यह प्रमाण होगा कि सचाई के तरीकों से भी सफलता मिल सकती है। इन डेरों में गुरुओं या आचार्यों का सम्बन्ध या दखल न हो। कार्यकर्त्ता सचाई से काम करें। यह पबलिक की सम्पत्ति है। मुझे कोई शोक नहीं वह आज उजड़ जाय।

नाम का जप करते रहने पर भी यदि हम बुरी दशा में मरे तो फिर इस नाम जप से क्या लाभ ? पंथाई या धर्मावलम्बी क्यों बनें। क्यों भक्ति करें ? कहने का भाव यह है कि विधिपूर्वक नाम जपने वाले दुखी नहीं रहने चाहिये अन्यथा उनके साधन में कमी है या त्रुटि है। राधास्वामी की शिक्षा के अनुसार मेरा कोई डेरा या धाम न बनाया जाय। दाता दयाल कह गये थे कि मेरी कोई समाधि न बने। कारण स्पष्ट है कि गुरु मरता नहीं। हम मूर्ख हैं जो समझते नहीं कि गुरु अजर अमर प्रकाश और शब्द स्वरूप है।

आगे अलख पुरुष दरबारा।
देखा जाय सुरत से सारा॥

हमारा निज स्वरूप प्रकाश और शब्द है। अब मैं शब्द और प्रकाश में रहता हूँ। जो वस्तु शब्द और प्रकाश में रहती, उसको सुनती और देखती है वह कुछ और चीज है। जब वह शब्द और प्रकाश को छोड़ देती है तो वह अलख हो जाती है। जैसे हमारे अन्दर में अलख है वह बाहर भी अलख

है। स्वामी जी का अलख शब्द से क्या भाव है मैं नहीं कह सकता । अन्दर में प्रकाश हो जाता है तो मैं वहाँ होता हूं। इसी तरह बाहरी दुनियाँ से भी मनुष्य बाहरी दृश्यों को भोग लेते हैं तो समय आता है कि वह उपराम हो जाते हैं।

पुरुष स्त्री विवाह करते हैं। विवाह के बाद भोग भोगते हैं। जब तृप्ति हो जाती है फिर छूट जाते हैं। हम धन कमाते हैं। फिर समय आता है धन से उपराम हो जाते हैं। कोई आदत हो गई फिर छूट जाती है। उपनिषद् कहती है चलो, ध्येय तक पहुंचो।

इस पर अगम लोक इक न्यारा ।
सन्त सुरत कोई करत बिहारा ॥

अगम क्या है ? अनुभव। भेद समझ में आ जाता है। यह करनी का मार्ग है। इसमें सरूर रहता है, उस अवस्था के बारे में अधिक कहा नहीं जा सकता।

तहाँ से दरसे अटल अटारी ।
अद्भुत राधास्वामी महल सँवारी ॥

अटारी कोई मकान नहीं बना हुआ है। वह है अटल। चलते चलते ला-मकानी हो गया। अन्य ग्रन्थों का प्रमाण देने वाले लोग सन्त नहीं। संत अपनी वाणी आप कहता है। दाता दयाल ने किसी की नकल नहीं की। कबीर तथा नानक ने अपनी वाणी आप कहीं। सन्त की यह पहिचान है कि वह अपनी ही वाणी कहता है। उसका अनुभव अपना होता है। मैं किसी की नकल नहीं करता।

इसलिये यह शब्द अटल अटारी आया है। उसका भाव है हमारी अवस्था का अटल हो जाना।

सुरत हुई अति कर मगनानी ।
पुरुष अनामी जाय समानी ॥

फिर वह अनाम गति में चला जाता है। मगर बहुत कम, हर समय नहीं। कर्म खेंच लाता है। मैं जीवन में ६-७ बार उस अवस्था में गया हूँ।

सन्त गति अर्थात् प्रकाश और शब्द में हमेशा रहता हूँ।

यदि अनाम गति में चला गया तो क्या हो गया ! यह कि जीवन की कुरेद को समाप्त कर दिया।

यदि कोई अनाम गति में हो तो उसमें शक्ति होनी चाहिये कि वह कुछ कर सके - मैं चाहता हूँ कि मानव जाति को शान्ति मिले। भारतवर्ष में इन्सानियत का राज्य हो। धार्मिक द्वेश समाप्त हो। यदि २-३ वर्ष में भारत में इन्सानियत का राज्य हुआ तो समझुंगा कि सन्त कुछ कर सकता है वरना सन्तमत केवल व्यक्तिगत शान्ति के लिये है। मालिक की गति का पता नहीं। यहां अनेक आये। हर एक अपनी बुद्धि लड़ा गया। धर्म, सम्प्रदाय, पंथ बना गये। डेरे धाम बना गये।

मैं (Research) खोज करने वाला हूँ। आजमाना चाहता हूँ कि क्या सन्त कुछ कर सकता है या नहीं।

मेरा अनुभव भिन्न है। अब मैं देहली आया। फौज का एक साबिक मुलाजिम मिला। शास्त्र पढ़ा लिखा था। मस्तिष्क की दशा खराब थी। मुसीबत में था। उसका पत्र आया था। उसके उत्तर में मैंने मस्तिष्क की दशा पर खेद प्रकट करते हुये अपनी शुभ भावना दी थी। लिखा था कि मेरे ध्यान से तुझको शान्ति मिल जायगी। राधास्वामी नाम जपा करो। यदि दो माह में लाभ हो तो मुझे शिवरात्रि पर मिलना। वह देहली मिला। कहा मुझे दो माह में बहुत लाभ हुआ। लोग कहते हैं गुरु दूर रह कर भी मदद करता है मगर दो माह में मुझे तो उसका कोई ख्याल भी नही आया। अतः अनुभव ने सिद्ध किया कि यह जो कुछ है अपना ही आपा (self) है। जैसा संस्कार और ख्याल ले लेता है और विश्वास रखता है वैसा होता रहता है।

एक व्यक्ति सहारनपुर से मेरे पास आया। मैंने पूछा क्यों आये हो ? उसने कहा कि आपने बुलाया है। सुबह दो बजे आप अभ्यास में प्रगट हुये और कहा कि होशियारपुर आओ।

मुझे दुख है कि राधास्वामी नाम लेवाओं में से लोग राधास्वामी मत

की शिक्षा को समझ न सके और न मन की गढ़त कर सके। इस मन का समझना बड़ा आवश्यक है। इस पर दातादयाल ने इस मन को समझाते हुए एक शब्द लिखा है।

साधो यह मन समझन योग।
मन ही ज्ञान और मन ही ध्यान है, मन ही मोक्ष और भोग॥
मन में वेद को पढ़ते ब्रह्मा, शंकर करते योग।
मन ही अन्दर सृष्टि व्यापी, मन ही में है रोग॥
मन गोविन्द मन गोरख रूपा मन ही योग वियोग।
मन ही पानी मन ही अग्नि है, मन ही आनन्द सोग॥
मन ही गुरु है मन ही चेला, मन ही ब्रह्म संयोग।
मन ही का व्यौहार जगत में, नाहीं जानें लोग॥

मैं एक बार दाता दयाल के पास लाहौर गया। दातादयाल ने कहा कि तुम बार बार मेरे पास आते हो मैं तो तीन बार हुजूर के पास गया था। मैंने पूछा कि हुजूर ने आपको क्या बताया! उन्होंने कहा कि मैंने हुजूर से पूछा कि रचना क्या है? कहा—सामने बैठो। मेरी ओर देखो। मुंह खोला और बन्द किया। बात मेरी समझ में आगई मगर तेरी समझ में नहीं आती।

मैं अब इस नतीजे पर आया हूं कि मानव जीवन चेतन्य का एक बुलबुला है उसी से प्रगट हुआ और उसी में समा जायगा।

'मन के नाच सारे नाचें ऋषि मुनि देवा।' मुझे भी मन के चक्र में आना पड़ता है। अशान्त प्राणियों के ख्याल से अशान्त होना पड़ता है। चोर को पकड़ने को चोर बनना पड़ता है। मैं दर्देदिल रखते हुये असलियय को प्रगट किये जाता हूँ। कोई माने माने, न माने उसकी इच्छा।

(इस समय का सत्संग समाप्त)

Peace to all—सबको शान्ति

—000—

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

रामानुज और धनुरदास जी

दोहा—इत का चित जब उत लगा, काह सुनाओं तोहि ।
पहिले जो थी सृत्तिका, स्वर्ण भई वह मोहि ॥

(श्री देव कवि वाचस्पति शर्मा जी)

धनुरदास जाति का नट था, बड़ा हृष्ट पुष्ट और डील डौल वाला था, शरीर के अंग २ से बल प्रगट होता था । उस की जाती के लोग भी उसे सबसे अफिक बलवान समझते थे । कोई भूल कर भी उस के मुकाबले में नहीं आता था, मल्ल युद्ध में वह अद्वितीय समझा जाता था । उसका घर त्रिचनापली के एक उरयार नामक नगर में था । वहां ही यह लोंगों को मल्ल विद्या के दांव पेच सिखाया करता था ।

धनुरदास कनकम्ल नामक एक स्त्री पर मोहित हो गया । क्यों कि वह बहुत रूपवान थी । जब से धनुरदास ने उसको देखा तब से उसे अपने तन बदन की सुध जाती रही । इस को देख कर वह सब कुछ भूल गया । प्रेम अद्भुत वस्तु हैं । जिस के हृदय में यह उत्पन्न होता है उसे कुछ का कुछ बना देता है । प्रेम चाहे दैविक हो या मानुषी दोनों ही गति विचित्र हैं । धन्य है वह जिन के हृदय में यह उत्पन्न होता है ।

चैत्र का महीना था, रंगनाथ जी के दर्शन का मेला होने वाला था, कनकम्ब को मेला देखने की इच्छा हुई , वह उरयार से रंगनाथ जी में चली आई । धनुरदास को उस का वियोग कठिन था, जल के बिना मीन कहाँ रह सकती है । धनुरदास भी इस के साथ २ चला आया । वह ऐसा अपने आप को भूल गया था कि उस में लज्जा, भय, संकोच कुछ भी नहीं रह गया था । भरे मेले में आगे २ कनकम्ब थी पीछे २ धनुरदास छतरी लिये हुए चल रहा था ताकि उस को धूप से कष्ट न हो । लोगों ने इस को इस दशा में देख कर तरह तरह के दुर्बचन कहे परन्तु उस ने कुछ परवाह नहीं की ।

दोहा—प्रेम मार्ग अति कठिन है, ज्यों खाँडे की धार।
कच्चा जन पहुंचे नहीं, डूब मरे विचकार॥
प्रेम मार्ग में वह चले, जो हो पक्का शूर।
हानि लाभ देखे नहीं, अर्पे सर्वश पूर॥
(श्री देव कवि जी वाचस्पति शर्मा जी)

संसारी जनों को प्रेम का पता नहीं, वह क्या जानें कि प्रेम क्या वस्तु है। वह तो लकीर के फकीर हैं। उन में कायरता का डेरा है। वह प्रेम को नहीं जानते। प्रेम में विशेष प्रकार का बल है, विशेष प्रकार की स्वतन्त्रता है।

तमाशा देखने वाले ठट्ट के ठट्ट खड़े थे, इस जोड़े को देख करहँस रहे थे। सामने से स्वामी रामानुजाचार्य कावेरी नदी में स्नान करके अपने शिष्यों समेत आ रहे थे, उनकी दृष्टि भी इस जोड़े पर पड़ी। औरों की भाँति उन को कुछ आश्चर्य नहीं हुआ वरंच वह इसे देखकर प्रसन्न हुए और अपने शिष्यों से कहने लगे, पुत्रो! इस मेले में सब सेअधिक देखने योग्य यह जोड़ा है। कहने के लिये यह पुरुष इस स्त्री का दास है परन्तु वास्तव में इस की आड में ईश्वर का प्रेम छिपा हुआ है। जो अवसर पाकर विशेष चमत्कार दिखावेगा। साधारण मनुष्यों में जब किसी स्त्री का प्रेम होता है तो वह उसको छिपा रखता है परन्तु यह निष्कपट है जो कुछ है उसे चुराए हुए नहीं है। जो दृश्य मैं इस समय स्त्री के विषय में देख रहा हूँ वही ईश्वर के विषय में भी दिखाई देता है। वहाँ भी प्रेमी को सिवाय ईश्वर के और कुछ दिखाई नहीं देता। शिष्यों ने कहा "भगवन्! यह विषयी और कामी पुरुष है इस के प्रेम और ईश्वर के प्रेम का क्या सम्बन्ध है"? रामानुज ने कहा तुम भूल पर हो, आओ देखो यह किस प्रकार नीचता से उच्च मार्ग की ओर जाता है।

यह कह कर रामानुज जी ने उस को बुला भेजा, वह निर्भयता के साथ चला आया। रामानुज जी के नेत्रों में ईश्वर के प्रेम का तेज चमक रहा

था । उस ने धनुरदास के हृदय पर प्रभाव विशेष डाला । रामानुज जी ने पूछा तू कौन है और यहाँ क्यों आया है ? उस ने कहा मैं पहलवान हूँ । यहां मेला देखने आया हूँ । रामानुज जी बोले तू कैसा निर्लज्ज है कि इस भरे हुए मेले में स्त्री के पीछे घूम रहा है । तू अपने आप को पहलवान और फिर इन्द्रियों का दास बना हुआ है । धनुरदास ने लज्जित होकर सिर झुका लिया और कहने लगा महाराज मैं क्या करूँ मेरा हृदय मेरे वश में नहीं है । जिसने कनकम्ब को इतना सुन्दर बनाया है उसी ने मेरे हृदय में प्रेम उत्पन्न किया है । बात सच्ची थी, रामानुज जी प्रसन्न हो गए और कहने लगे पुत्र क्या तू कनकम्ब से असंख्य गुण सुन्दर स्वरूप को देखना चाहता है यदि चाहता हो तो मैं तुझ को दिखा दूं । धनुरदास अवाक्य रह गया । रामानुज जी ने उसके सिर पर कृपा का हाथ फेरा और उसको मन्दिर में लाए और कहा सब से अधिक सुन्दर रघुनाथ जी हैं जो जगत् के मालिक हैं जो सुन्दरता उन में है वह तीन लोक के किसी अस्तित्व में नही है । तू अपनी आन्तरिक दृष्टि से परमात्मा के तेज का दृश्य देख ।

रामानुज जी के उपदेश ने मंत्र वत उस पर प्रभाव डाला वह मस्त हो गया और बावलों की तरह नाच २ कर गाने लगा । "हे रंगनाथ ! तू सचमुच सबसे अधिक सुन्दर है । अब मैं तुझको कभी न छोड़ूँगा" वह सब के देखते २ मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़ा । इस मूर्छा दशा में उस ने अपनी आन्तरिक दृष्टि में ईश्वर का दर्शन किया और तन मन से उन पर मोहित हो गया । गुरू का उपदेश तीर की तरह कलेजे में लगा धनुरदास के संसार जीवन की काया पलट गई, आज से उसने भक्ति जीवन में पांव रक्खा ।

दोहा—सतगुर मारा तान कर, शब्द सुरंगी बान ।
मेरा मारा जो जिये, तो कर नहिं गहूं कमान ।।

जब उसको चेत आया तो रामानुज जी के चरणों पर गिर पड़ा और कहने लगा भगवन् तुमने स्वयम मुझ को खोजा, स्वयम भक्ति का उपदेश

दिया, मेरे नेत्र खुल गए, मुझ को जो आनन्द मिला, उसका वर्णन नहीं कर सकता तुमने ऐसी कृपा की है अतः अब मुझको अपने चरणों में रहने दो। ताकि मैं भक्ति का जीवन व्यतीत करूं। रामानुज मुस्कराए और स्त्री सम्प्रदाय के नियमानुसार उसका पंच संस्कार करके अपना शिष्य बना लिया। और अपने साथ रहने की आज्ञा दी। धनुरदास की अवस्था बदल गई, न खाने पीने की सुध है। न किसी और बात का ध्यान है। रात दिन ईश्वर के भजन से काम है। लोग इसकी भक्ति देख कर दंग रह गए। और उस की अवस्था दिन प्रति दिन बढ़ती गई। और वह रामानुज जी का विशेष शिष्य हो गया।

कनकम्ब उसके बिना कब रह सकती थी वह भी रामानुज जी के पास आई। और कहने लगी महाराज मैं भी धनुरदास के बिना नहीं रह सकती, मुझको भी अपना शिष्य बनाइये। रामानुज जी उसकी दया देख कर उस को भी अपनी शिष्या बनाया। और उनको पति पत्नी के समान रहने की आज्ञा दी। और दोनों बड़ी भक्ति के साथ गुरु के चरणों में रहने लगे।

लोग कहते हैं कि कनकम्ब की भक्ति धनुरदास से अधिक थी। और ज्ञान ध्यान में उस ने बड़ा उच्च पद प्राप्त किया था। यह दोनों रात दिन स्वामी रामानुज के साथ रहते थे। और उनको सब प्रकार की सेवा किया करते थे. जो लोग अच्छे सत्संग में पड़ जाते हैं वह सुधर जाते हैं। सत्संग का बड़ा प्रभाव होता है।

चौपाई।

सत्संगति मुद मंगल मूला, सोई फल सब सिहसाधन फूला।

यदि किसी को किसी महात्मा की संगत मिल जाय तो उससे बढ़ कर सौभाग्यवान कौन है। परन्तु यह ईश्वर की कृपा से प्राप्त होता है। धन्य है वह लोग जो ऐसे महात्माओं की संगत में बैठ कर भक्ति का मार्ग सीखते हैं। वह ईश्वर का दर्शन पावें और कृत्य २ होंगे।

—0—

स्वास्थ्य और भोजन

(१) शरीर का भी ध्यान रक्खो

हिन्दुओं में जिसको देखो वह शरीर की ओर से बेपरवाह दिखाई देता है और उस को लानत मलामत का निशाना बनाया करता है। दो चार दस ज्ञान की बातें क्या सुनलीं कि ज्ञानी ही बन गये और लगे ज्ञान की निराली बातें छाँटने। यह खबर ही नहीं कि आखिर यह देह भी किसी उद्देश्य के लिये है और इसका कोई अभिप्राय भी है। हमारे यहाँ इस जमाने में अमल करने वाले कम हैं मगर सुनी सुनाई बातों को चबा चबा कर दिमाग को चाटने वाले बहुत हो गये। जिन महात्माओं ने शरीर को दुख का कारण बताया था, इसका अभिप्राय कुछ और था। यह नहीं कि उसको यों ही अनउपयोगी बना दिया जाय।

जिसका शरीर अच्छा नहीं, समझो कि उसका मन भी अच्छा नहीं है। जिसका मन अच्छा नहीं है वह धर्म के मार्ग पर क्या खाक चलेगा। जप, तप, पूजा, योग का साधन केवल तन्दुरुस्त मनुष्य कर सकता है। रोगी तथा स्वास्थ्य हीन से न दुनिया का काम होगा न धर्म का। वह निकम्मा और अनउपयोगी आदमी है। अतः जो व्यक्ति बिना समझे बूझे अपने शरीर को सुखाता है वह पुण्य नहीं बल्कि पाप करता है। हिन्दी भाषा की एक कहावत इस ख्याल की व्याख्या बड़ी अच्छी तरह करती है। वह यह है—

'काया राखै धर्म है, काया मारे पाप।'

प्राचीन ग्रंथों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि ऋषियों को अपने स्वास्थ्य का बड़ा ध्यान रहता था। यहाँ तक कि मुसीबत के समय वह इस प्रकार के पदार्थ खा लिया करते थे जो वास्तव में वेदना का कारण हुआ करते हैं।

मनुष्य न अकेला आत्मा ही है न अकेला देह ही है, किन्तु वह दोनों के मिलौनी से बना है। जो वस्तु कि आत्मा और देह को मिलाती है वह तीसरा अंश उसका मन है। इसलिये अच्छा आदमी वह है जिसके यह तीनों अंग स्वस्थ रहें। आत्मा के लिये हमारे दुख सुख रोग और मृत्यु नही हैं। यह सच है मगर इस आत्मा को जानता कौन है? इसलिये यहाँ हम जिस गरज से आत्मा का शब्द प्रयोग करते हैं वह केवल साधारण लोगों के लिये है न कि फिलोसफर और ज्ञानियों के लिये। यहाँ हम उसको आत्मा कहेंगे जो साधारण समझ वालों की खयाल में जन्मता और मरता है और बस।

दुनिया में अधिकतर लोग जिन चीजों के इच्छुक होते हैं वह यह हैं— दीर्घ जीवन, सुख, धन, यश, संतान और स्वर्ग। इन छः के अतिरिक्त तुम यदि किसी और वस्तु को जानते हो तो बतादो। मैं लगे हाथ इनको भी इसमें शामिल कर लूँ। यह छः बातें निर्बल आदमियों के हाथ नही आती। देह से निकम्मा आदमी अधिक जीवित नहीं रह सकता क्योंकि बीमारी इसके शरीर के अंगों में बिछ छिड़कती रहती है। शरीर से निकम्मा आदमी धन नहीं कमा सकता, क्योंकि धन परिश्रम से प्राप्त होता है और परिश्रम केवल तन्दुरुस्त मनुष्य कर सकता। जिसका शरीर अच्छा नहीं है उसको सुख नहीं मिल सकता। वह तो रात दिन खाट पर पड़ा हुआ कराहता रहेगा। वह भोग के स्वाद को क्या जाने। एक तन्दुरुस्ती हजार नियामत है। इसी प्रकार वह व्यक्ति स्वर्ग और सांसारिक मान और यश से वंचित रहता है क्योंकि यह सब स्वास्थ्य के आधीन हैं। यदि यह बात गलत है तो हमको बता दो। किसी पुराण या शास्त्र में किसी तरह का प्रमाण दिखादो।

सारे शिष्टाचार की निर्भरता भी तन्दुरुस्ती पर है। यह बात सब लोग जानते हैं कि क्रोध केवल कमजोर आदमी को सताता है। बलवान क्रोध कम करते हैं। इसी प्रकार मनुष्य के अन्य भावो का हाल है।

जब शरीर जगत की व्यवस्था में इतनी मुख्य और लाभदायक बस्तु है तो फिर इसको गलती और गलत समझी से क्यों दुर्बल और नष्ट किया जाता है। क्या वह महात्मा अज्ञानी नहीं है जो खड़े खड़े अपने देह और हाथ पाँवों को सुखा लेता है। हम परलोक की बात नहीं करते। वह अदृश्य विषय है। कौन जाने क्या होता है। जो वस्तु यहाँ प्रत्यक्ष है वह तुम्हारे सामने है। तुम स्वयं दृष्टि को ऊंची करके देख सकते हो कि दुनिया में शक्ति का झंडा ऊंचा है। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस," "कमजोर की बहू, जने जने की जोरू।" रोगी, दुर्बल और निकम्मे आदमी यहाँ क्या सुख भोग रहे हैं जो आगे भोगेंगे। वास्तव में किसी ने क्या कहा है :—

जाको दर्शन इत्त हैं, ताको दर्शन उत्त।
जाको दर्शन इत नही, ताको इत्त न उत्त॥

छाँदोग्य उपनिषद के सातवीं परिपाटि के अनेक खंडों में नारद ऋषि और सन्तकुमार का सम्वाद आया है। यह कई तरह पर समझने और विचार करने योग्य है चूँकि यह सम्वाद लगभग 10-15 पृष्ठों का है, हम इसका सारांश भी यहाँ नहीं लिख सकते। फिर भी इतना कह सकते हैं कि इस सम्बाद में संत कुमार ने नाम, वाणी, मन, ध्यान, ज्ञान शक्ति आदि को एक दूसरे से अधिक शक्तिशाली बतालाया है।

जितनी शक्तियाँ हैं चाहे वह मन की हों या मस्तिष्क की, सब स्वास्थ्य पर निर्भर है। यह दुनिया कर्म क्षेत्र है। यहां हम सब लोग कर्म करने के लिये आये हुए हैं। कर्म करना इन्द्रयों का धर्म है। इन्द्रियाँ शरीर में हैं चाहे वह बाहर की हों या अन्तःकरण अर्थात अन्तर की हों। इन्द्रियों और समस्त अङ्गों के मिलाप का नाम शरीर है। तुम देखते हो कि यदि किसी की एक इन्द्रिय दोषयुक्त, दुर्बल या नष्ट-भ्रष्ट हो तो उसमें ऐब आ जाता है और वह लक्षण अशुभ ख्याल किया जाता है। फिर क्या लाभ कि सारा शरीर दुर्बल,

रोगी या निकम्मा बना दिया जाय। जो शरीर के दृष्टिकोण से दोषपूर्ण है, उससे तुम किसी तरह की भलाई की आशा नहीं रख सकते। यह केवल साधारण बात है। क्या तुम जानते हो कि शरीर कैसे बना रहता है। शरीर परिवर्तन शील है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है। प्रत्येक वस्तु अपने में कुछ न कुछ निकालती रहती है और कुछ न कुछ अपने में से निकालती रहती है। सांस लेने से हवा के सूक्ष्म परमाणु अन्दर आते और जाते रहते हैं। जो साँस बाहर जाती है, विषैले परमाणुओं को निकालती है और जो अन्दर की ओर आती है शुद्ध परमाणुओं को खेंच कर शरीर में मिलाती रहती है। यह कार्य प्राकृतिक रूप से होता रहता है। इसका चाहे तुम को इस समय ज्ञान हो या न हो मगर नियम बेकार नहीं रहता। इसी सिद्धान्त पर तुम मुँह से अपने अन्दर भोजन पहुँचाते हो जो घुल कर शरीर का अंग बनता है और मल मूत्रेन्द्रिय से उस अंश को निकाल देते हो जो घुलने योग्य नहीं है और जो बिल्कुल निकम्मा और निरर्थक है। बुद्धि, चित, अहंकार और समस्त दूसरी इन्द्रियां इसी व्यवहार के क्रम में संस्कार और कर्म का चक्र निरन्तर जारी रहता है। इसी एक बात को समझ लो कि मनुष्य सर्वदा नवीनता प्रिय और नई नई वस्तुओं के देखने, सुनने, चखने, छूने और पढ़ने का इच्छुक रहता है। जो वस्तु दीर्घकाल तक पास रहती है दृष्टि से गिर जाती है। नई वस्तु की चिन्ता होती है। चाहे धर्म हो या कर्म सब में परिवर्तन आता रहता है। आदमी पहिले किस ख्याल का लालायित रहता है।' जब वह पूरा हो जाता है तब इसको छोड़कर नये ख्याल को ग्रहण करता है। इसी परिवर्तन के क्रम में इसकी उन्नति होती है। जो लोग इसके प्रतिकूल कार्य करते हैं अपनी पुरानी आदत के कारण उन्नति करने से रह जाते हैं। जीवन चाहता है कि क्षण क्षण में परिवर्तन होता रहे। जो मकान बनता है वह प्रति वर्ष मरम्मत की जावे तो शीघ्र खराब हो जायगा। यही दशा इस शारीरिक भवन की है। यह भी चाहता है कि इसके पुर्जे हमेशा नये नये होते जायें और इन पर नया रँग रोगन चढ़ता रहे। तब तो यह काम का रहेगा नहीं तो शीघ्र नष्ट हो जायगा। हम और तुम हजार बातें बनायें मगर कल और माया की

प्रज्ञा होने के कारण मजबूर हैं कि उनका टैक्स अदा करते रहें। परिवर्तन का दूसरा नाम काल और माया है। तुम देह रखकर शरीर धारी होते हुये कैसे इस पर विजय पा सकते हो। लाख तर्क वितर्क करो। कोई और चाहे तुम्हारी मान ले, मैं कम से कम इसके मानने के लिये तत्पर नहीं हूं। जब तक शरीर है और तुम समझते हो कि शरीर है तब तक तुम इसकी उपेक्षा नहीं कर सकते हो। यह शरीर हर तीसरे या सातवें साल बिल्कुल बदल जाता है। माँस मज्जा हड्डी सब में परिवर्तन आ जाता है।

सम्भव है तुमने शारीरिक आकर्षण रहस्य को अब समझ लिया होगा। अच्छे परमाणु खिंच कर आते हैं और शरीर का अंग बनते हैं। बुरे परमाणु मल के रूप में बाहर निकलते हैं। यह आकर्षण के नियम राग द्वेष के दो रूप हैं, जो साइन्स के शब्दों में "सेन्ट्रीफ्यूगल और सेन्ट्री पीटल फोर्सेज" कहे जाते हैं। यह केवल तुम में ही काम नहीं करते बल्कि दुनिया की तमाम प्राकृतिक शक्तियाँ इस प्रकार का व्यवहार करती हैं। यदि शरीर को तन्दुरुस्त रक्खा जाता है और उसकी तमाम इन्द्रियाँ ठीक और बलवान हैं तो वह परमाणुओं को खींच खींचकर अपने में मिलाती रहेंगी वर्ना उनमे यह काम न होगा और अयोग्यता की दशा में वह अपना कर्त्तव्य पालन न कर सकेंगी। यदि तुम अपनी गलती से किसी इन्द्री को भी नष्ट कर दोगे तो अंगहीन बन जाओगे और अंगहीन मनुष्य विश्वास के योग्य नहीं होता। इससे सब लोग खटकते रहते हैं। यदि कहीं किसी काम से पहिले इसका यह रूप देख लिया जाय तो बदशगुनी मानी जाती है। मैं 'अंगहीन' आदमियों की बाबत कभी बुरे बुरे ख्याल नहीं रखता था मगर अनुभव ने सिद्ध कर दिया कि ये बिल्कुल विश्वास के योग्य नहीं होते और इनसे विश्वासघात होता है। इस प्रकार के अनुभव में सौ प्रतिशत घटनायें इसी तरह की निकली। एक भेंड़ा आदमी मुझसे बहुत मिला करता था। अत्यन्त मीठी बाणी वाला और मिलनसार था। मित्रों ने कहा इससे संभलकर रहना। मैंने समझा बहुत अच्छा आदमी है। उसके साथ सद्व्यवहार करता रहा। अन्त में इसने अपने थोड़े से लाभ के लिये मेरी बड़ी भारी हानि कर दी। इसी प्रकार और

भी घटनायें हुई हैं। यह केवल दृष्टांन्त मात्र है। कहने का अभिप्राय इतना ही है कि मनुष्य को चाहिये कि अपनी समस्त इन्द्रियों को अच्छी दशा में रक्खे। जीते जी उनको बिगड़ने न दे ताकि जितनी शक्तियाँ हैं सबकी वृद्धि होती रहे और इन सब के वृद्धि होने पर सम्पूर्ण शारीरिक और आत्मिक उन्नति निर्भर है।

हिन्दू धर्म में विशेष रूप से इस शरीर के विरुद्ध युद्ध करने की हिदायत की गई है। "मन को मारो, तन को जारो।" यही पुकार चारों ओर से है मगर लोग इस बात की जड़ तक नहीं पहुंचते कि यह शिक्षा किसके लिये है और क्यों दी गई है अथवा प्रत्येक व्यक्ति इसका अधिकारी भी है या नहीं। प्रथम तो इस "मारने और जलाने" का अर्थ केवल इतना है कि इनको काबू में रक्खा जाय। दूसरे यह शिक्षा भी केवल उन सांसारिक जीवन के अनेकानेक अवस्थाओं से गुजरते हुये लोगों के लिये है जिनको शान्ति नहीं मिली। वह पूजा करें। इन्द्रिय दमन करे। मेरी समझ में इस दिशा में कुछ दोष भी है। यदि मनुष्य समता के ढग पर चलता रहे तो इसको पूजा और इन्द्रिय दमन की बिल्कुल आवश्यकता नहीं रहती। कौनसा ऋषि ऐसा हुआ है जिसने स्वास्थ्य को मिट्टी में मिला दिया हो या जिसके पास बाल बच्चे न रहे हों। विशेषताओं को जाने दो। साधारण रूप से उनके हालात को पढ़ो। इसी तरह यह भी कहा गया है कि —

"संत सयान वही जग में, घर में जिन जोग कमान हो।"

समता या सम अवस्था स्वयं एक प्रकार का योग है। इसके सिलसिले में मनुष्य जो चाहे वह कर सकता है और इसकी कमाई पूरी हो सकती। जंगल में केवल जंगली मिजाज वाले और असभ्य आदमी बसते हैं। इनसे न धर्म का काम होता है न दुनियां का। कही सुनी बातो पर न जाओ। अपनी आंखों को खोल कर देखो। आखिर घटनाओं का कुछ महत्व है या नहीं।

अभिप्राय यह है कि मैं तुमसे भी बार बार कहूँगा कि शरीर की संभाल से कभी गाफिल न रहो। वह घोड़े के समतुल्य है और तुम यात्री के समतुल्य

हो। घोड़े की हत्या न करो वर्ना तुम्हारा बोझ कौन ले जायगा और कौन इष्ट स्थान तक पहुँचायेगा। हाँ इतना ख्याल रक्खो कि आवश्यकता से अधिक इसकी ओर ध्यान न दो ताकि वह तुम्हारे काबू में रहे। मैं यह कभी नहीं कहता कि तुम सब के सब पहलवान बनो मगर इतना हो कि जीवन की खेंचातान और संसार के संग्राम में काम करने के योग्य तो बने रहो। मेरा केवल इतना ही अभिप्राय है और कुछ नहीं। इस शरीर की संभाल के लिये चार बातें आवश्यक हैं:- (१) प्राण (२) वायु (३) जल (४) भोजन।

प्राण वह सूक्ष्म शक्ति है जो नस नाड़ियों को गति में रखता है। वह तुम्हारे अंदर है। इसका साधन इस प्रकार किया जाता है कि यह सदा चलता रहें ताकि शरीर के किसी भाग में कभी न आने पावे, न किसी विशेष स्थान पर इसकी अधिकता हो, क्योंकि प्राण की न्यूनता और अधिकता से रोग हो जाते हैं। प्रायः अंग जकड़ जाते हैं और सो भी जाते हैं। इस साधन के सिलसिले में व्यायाम, प्राणायाम और योगाभ्यास सभी आ जाते हैं। हठ-योग, डंड करना तथा सांस और नियमित सांस सब इसके अंतरगत हैं। यदि प्राण के रोकने का साधन न हो सके और वह कठिन भी है तो कम से कम शब्द का अभ्यास करो। इससे वही लाभ होगा और प्राणों का नियमत संचालन शरीर में रहेगा; क्योंक यह शब्द जो तुम्हारे घट में है प्राण पर अधिकार रखने की शक्ति रखता है। इसका अभ्यास सरल है। इस अभ्यास में संध्या, उपासना सब आ जाते हैं और मनुष्य को न केवल शारीरिक लाभ प्राप्त होता है किन्तु धार्मिक और आध्यात्मिक लाभ भी पहुंचता है; मगर शब्द अभ्यास के बताने वाले उस समय तक अपने भेद का तुमको परिचय नहीं देंगे जब तक उनको यह विश्वास न हो जाय कि तुम धार्मिक विचार वाले हो। इससे परिचय प्राप्त करने के लिये मैं अनुरोध करता हूं कि एक बार 'सुरत शब्द योग कल्पद्रुम' नामी पुस्तक का अध्ययन अवश्य करो। यह अभ्यास प्रातः सायं बराबर करते रहो। अवश्य लाभ होगा और प्राण संचालित रहने का जो लाभ है वह तुमको मिलेगा। प्राणों की गति से रक्त में गर्मी और गति आती रहती है और कोई इन्द्रिय खराब या नष्ट नहीं

होती और आदमी सुखी भी रहता है। अभ्यास इतना सरल है कि बूढ़ा, लड़का, पुरुष स्त्री सब कर सकते हैं। इसका अभ्यास वीर्य और ओजस को भी बढ़ाता है। अमृत की धार जो मस्तिष्क से तालू के मार्ग द्वारा निकलती है नियम पूर्वक जारी रहती है। यह स्वास्थ्य के लिये बहुत हितकर है।

(२) दूसरी वस्तु वायु है जो सदा शुद्ध और स्वच्छ होनी चाहिये। खुली हवा में रहने की आदत डालो। बन्द मकान में कभी न रहो। जहाँ की हवा विषैली, भारी और दूषित हो वहां रहन सहन मत करो। घर जब बनवाओ ऊंचा और चारों ओर से खुला हुआ हो ताकि सूर्य्य की धूप और हवा का प्रभाव भली प्रकार पड़ता रहे।

(३) जल के बारे में भी स्वच्छता का ध्यान रहे। तुम्हारे शरीर में १०० में ७० भाग पानी है। पानी के प्रयोग में कभी कभी न करनी चाहिये। पानी की कमी रक्त को बिगाड़ती है और शुष्क कर देती है। इसकी कमी और शुष्कता शारीरिक व्यवस्था को बिगाड़ देती है। बहुत से रोग रक्त की खराबी से उत्पन्न होते हैं और पाचन में इसी के कारण खराबी आती है। यदि तुम देखो कि सुबह के समय मल त्याग ठीक प्रकार नही होता अथवा कब्ज की शिकायत रहती है तो प्रातःकाल सूर्य्योदय से पहिले थोड़ी मात्रा में पानी पी लिया करो। थोड़ी ही देर पश्चात खुलकर मल त्याग हो जायगा और पाचन का दोष दूर हो जायगा। मैं न वैद्य हूँ न डाक्टर हूं। साधारण सी बातें तुमको बताता हूं जो मेरे व्यवहार में रही हैं। मुझको जिन नियमों के पालन से लाभ पहुंचा है वही तुमको भी बताता हूं। यह सब सहल हैं। न इनमें कुछ खर्च पड़ता है न खटका होता है। दो चार दिन इसको करके देखो। यदि लाभ हो कुछ दिनों चालू रक्खो, न लाभ हो तो छोड़ दो। कोई विवशता नहीं है।

(४) चौथी वस्तु भोजन है। यह भी ध्यान देने की वस्तु है। अट्ट सट्ट चीजें कभी न खाओ। दिन में केवल दो बार भोजन किया करो। मेरे माननीय मुन्शी सूरजनरायन साहब मेहर केवल दो बार भोजन करते हैं। यद्यपि उनके स्वास्थ्य में पहिले खराबी आ गई थी। अब पाचन की शिकायत

नहीं रहती। भोजन गरिष्ट न हो। सादा और शीघ्र पचने वाला हो भारी भोजन से रोग होता है। सादा भोजन स्वास्थ्य को बनाता है और शरीर के अंग और इन्द्रियां अच्छी दशा में रहती हैं। मैं इतना काम करता हूँ कि कठिनता से पाँच सात आदमी कर सकेंगे मगर मेरा भोजन बहुत थोड़ा है और वर्षों घी और दूध को भी हाथ नहीं लगाया। केवल हल्के २ दो तीन फुलके, भाजी और मामूली मात्रा में दाल लेता हूं। हां, घर पर आता हूं तो विवश घर वालों के आग्रह से दूध और घी स्तैमाल कर लिया करता हूं, क्योंकि मैं केवल हठ से किसी वस्तु का विरोध नहीं करता। मगर यहाँ भी कभी कभी केवल जौ के फुलके और साग खाता हूँ। इस समय दाल का प्रयोग प्रायः छोड़ देता हूं। जो लोग लाहौर में आकर मुझसे मिले हैं वह तुमको इस बात का विश्वास दिला सकेंगे।

मन बुद्धि और विचार भोजन से बनते हैं। यदि सादा और शीघ्र पचने वाला भोजन खाओगे, मन पवित्र, बुद्धि निर्मल और विचार ऊंचे होंगे। यदि इसके प्रतिकूल करोगे नतीजा भी प्रतिकूल होगा। सादगी के जीवन से उच्च विचार होते है। मानो या न मानो, करके देख लो।

मांस खाना स्वास्थ्य के लिये इतना लाभदायक नहीं है। यह न समझो कि मैं चूंकि मांस नहीं खाता हूं इसलिये मना करता हूं। मेरी राय धार्मिक दृष्टिकोण से नहीं है किन्तु स्वास्थ्य के नियमों के अनुसार है। मत विश्वास करो कि मांस शरीर को बलवान बनाता है। यदि सम्भव हो तो इसे त्याग दो। मांस का प्रयोग मनुष्य को उच्च विचार और विशाल हृदयी बनने से रोकता है क्योंकि मांस स्थूल और शीघ्र सड़ने वाली वस्तु है। इसके कारण हिंसा भी होती है। बुद्धि और जैनियों में इससे परहेज के कारण बहुत उच्च विचार वाले आदमी हुआ करते है। अब भी दुनिया में यही दशा है। जिन जिन को समझ आती जाती है वह मांस भक्षण छोड़ते जाते हैं। मांस भक्षी साधारणतया हृदय के कठोर हो जाते हैं। उनमें निकृष्ट भाव प्रबल हो जाया करते हैं। मांस भक्षी पशु आम तौर से मक्कार और छली कपटी होते हैं। अपना शिकार धोके से करते हैं। यह दशा वनस्पति खाने वाले पशुओं

की नहीं है। बैल, हाथी और भैंसों को देखो। बिना डर भय के सामने लड़ने के लिये आते हैं। मगर शेर, चीते, भेड़िये दबक कर शिकार करते है। [illegible] भक्षी लोग जब पाचन आदि रोगों में ग्रस्त होते हैं कभी कभी मर जाते हैं मगर अन्न अहारी इस भय से मुक्त हैं। इसी प्रकार नशीली वस्तुओं [illegible] क्योंकि वह रक्त में बहुत गर्मी पैदा करती हैं और शरीर के पुर्जों को शीघ्र बिगाड़ देती हैं।

तुम साग, तरकारी, फल, फूल और अन्न समता के साथ खाया करो। इनसे स्वास्थ्य अच्छा रहता है। इनके आहारी लोग परिश्रमी भी होते हैं। धार्मिक पूजा पाठ तथा उपासना की अधिक योग्यता ऐसे ही लोगों में होती है। केवल इसी कारण बुद्ध, जैनी और सन्त मत के मानने वाले मांस और शराब का निशेध करते है।

यदि तुम थोड़ी साधारण साधारण बातों को अपने जीवन का नियम बनालो तो सदा तन्दुरुस्त रहोगे और तन्दुरुस्त रह कर लोक परलोक दोनों को सरलता से जीत सकोगे। यदि स्वास्थ्य की ओर म बिल्कुल असावधानी है और देह नाकारा है तो मैं केवल इतना कहूंगा कि—

जब तुम दुनिया का सरल काम नहीं कर सकते तो तुमसे परमार्थ के कार्य्य की क्या आशा रक्खी जाय। इसलिये इस कहावत को सदा याद रक्खो कि "तन्दुरुस्ती हजार नियामत और एक रोग हजार आफत।"

निवेदन

जिन भाइयों ने अभी तक अपना शुल्क नहीं भेजा है वह तुरन्त भेजने का कष्ट करें अन्यथा मजबूर होकर पत्रिका बन्द कर देनी पड़ेगी।

सम्पादक

(२) भोजन और मनुष्य के स्वास्थ्य पर उसका प्रभाव

जो व्यक्ति जैसा भोजन खाता है उसके मन और शरीर उसी प्रकार के बनते हैं क्योंकि उनके निर्माण में भोजन का बहुत बड़ा भाग होता है। हिन्दुओं में संसार की अन्य जातियों के विरुद्ध भोजन के विषय में प्राचीन समय से वादविवाद होता आया है। अनुभव ने जिस भोजन को बहुत लाभदायक सिद्ध किया उसी के प्रयोग और जारी रखने पर अधिक बल दिया। बुरे भोजन की बुराई बता दी गई और जो लोग उसको छोड़ नहीं सकते थे उन पर सख्ती तो नहीं की गई, हां, उनको साधारण मनुष्यों की बस्तियों से पृथक रहने का आदेश दिया गया ताकि उनके दूषित प्रभाव से और सब सुरक्षित रहें। इस भोजन की जांच पड़ताल और अनुसंधान में सबसे अधिक कार्य धर्म के अनुयाइयों ने किया है; क्योंकि प्रारभ ही से उन को अपने मनके गढ़ने और उसको एक विशेष ढंग से स्थिति रखने का ख्याल था। चरकशास्त्र जो हिन्दुओं के आर्युवेद का प्रमाणित और सबसे प्राचीन ग्रंथ है, हर प्रकार के भोजनों के प्रभाव और परिणाम की व्याख्या से परिपूर्ण है। इसमें लगभग उन सारी वस्तुओं का वर्णन उस विशेषता की दृष्टि से आ जाता है जो प्राचीन हिन्दुओं के धार्मिक ग्रंथों में सम्मिलित था। यही दशा सुश्रुति और वागभट्ट आदि की है मगर उनमें चरक की सी विशेषता नहीं है। यदि हम चिकित्सा की पुस्तकों को छोड़ दें और विशेष धार्मिक किताबों और दर्शन शास्त्रों को भी हाथ में लें तो वहाँ भी भोजन के विषय के सूक्ष्म वर्णन का पता मिलता है यहाँ तक कि उपनिषद जैसे शुद्ध ज्ञान काण्ड भी इससे रहित नहीं हैं। वृहदारण्यक उपनिषद में एक स्थान पर विशेष प्रकार की संतान उत्पन्न करने के संबन्ध में विशेष प्रकार की खुराक के प्रयोग के आदेश का पता हाथ आता है। बौद्धों और जैनियों ने तो अपने समय में और भी विशेषता दिखलाई और बाल की खाल निकालते हुए हर वस्तु की विशेषता कर दी।

इससे चिकित्सकों और वैद्यों को विशेषतया बहुत लाभ पहुंचा और रोगियों के खाने पीने के सामान जो आज कल बढ़ते जाते हैं वह अधिकतर

वही हैं जिनका आदेश अनुभवी भिक्षुओं ने किया था। वैष्णवों ने उनका अनुसरण किया। यदि हम गलत न समझे जावें तो आजकल वैष्णव धर्म के खान पान में जो वस्तुयें प्रयोग की जाती हैं इन सबको इन बौद्धों और जैनियों की जानकारी और खोज का परिणाम कह सकते हैं।

भोजन से न केवल मन और मस्तिष्क ही बनते हैं किन्तु सारा शरीर भी बनता है और मनुष्य के विचार, भाव और उत्साह पर भी वह प्रभावित रहता है। मनुष्य की असलियत और उसके स्वभाव के समझने के लिये उसकी प्रतिदिन की मिली जुली खुराक का हाल पूछलो और तुम सहज ही में पा जाओगे कि वह कैसा होगा।

श्रीमद्भगवद्गीता तक में भी इस भोजन के विषय पर स्पष्ट और एक तरह पर प्रमाण सहित व्याख्या की गई है। और यदि सबको छोड़ कर गीता ही के शब्दों और उपदेशों पर विचार किया जाये तो वह हमारे भोजन की सूक्ष्मता और स्थूलता पर बहुत कुछ प्रकाश डालते हैं।

यह भोजन धार्मिक आचार्यों के विचार के अनुसार तीन प्रकार का होता है —

सात्विक, राजसिक और तामसिक। इन तीनों के गुण पृथक पृथक हैं। सत सूक्ष्म है तम स्थूल है और रज में सूक्ष्म और स्थूल दोनों की मिलौनी है। अब और इनकी थोड़ी सी व्याख्या करदें ताकि हर साधारण मनुष्य और अपने तौर पर इनकी विशेषता समझ सके।

(१) सात्विक या सतोगुणी खुराक के सामान :—

इसमें चावल दूध, घी, मक्खन, दाल, जौ, मूँग, मोठ, फल, मेवा, पचने वाली सब्जी तरकारी, मीठी और खटमीठी वस्तुयें सम्मिलित हैं, जो तीक्ष्णता रहित हैं। इनके प्रयोग से जो परिणाम होता है वह निम्न लिखित है:—

आयु बढ़ती है, चित्त शान्त रहता है। प्रेम, बल, दया, पुरुषार्थ, न्याय प्रियता, शीलता, वीर्य रक्षा, बुद्धि विचार, शान्त स्वभाव, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त होता है। मनुष्य सूक्ष्म प्रकृति का होकर चंचलता और क्रोध आदि के वशीभूत नहीं होता।

इसके कारण धर्म और दर्शन शास्त्रों का आशय हाथ आता है और पक्ष-
पात रहित हर बात को समझने बूझने के योग्य बनता है ।

(२) राजसिक या रजोगुणी आहार की वस्तुयें—

इनमें उड़द, चना, गेहूं, अरहर, मूली, ज्वार, बाजरा, गाजर,
अरवी, पका आम, इमली, शराब, माँस, दही, और थोड़ी तेज
तरकारी आदि भी सम्मिलित हैं । कड़वी, खारी, अधिक
रूखी वस्तुयें भी इनमें सम्मिलित हैं । मिर्च, लौंग, गर्म
गुणी हैं । इनके प्रयोग से जो फल होता है वह यह है—
काम उत्पन्न होता है, शक्ति अधिक बढ़ती है । वीर्य
गाढ़े होने के कारण स्वप्नदोष हो जाया करता है
कमजोर होते हैं । मन चंचल होता
हालत होती है । काम
हृदयता जोर प
स्वभाव
चित्त
करते र
पता नहीं
व्यक्ति उनके

(३) ताम

इसमें हर प्रक
जूठा खाना, सड़ा हुआ
हुआ बन्द खाना. बहुत
भंग, बिगड़ा हुआ दूध आदि

तामसी अन्न में मटर,
गरिष्ट और शीघ्र न पचने
फल होता है वह यह है :—

तमोगुणी है । सतोगुणी मनुष्य सदा वह भोजन करे पैदा करे । भैंस का
में पचने वाले अधिकतर तमोगुणी होते हैं
जिनसे स्थूल भाव में जोश आये वह
मात्रा में हर
प्रद सिद्ध होता है । अच्छा भी तमोगुणी हो जाता
चैतन्य और फुर्तीला रहे । सुस्ती न लाये । गाय का भोजन चुपो ।
दूध रजोगुणी, घोड़ी, ऊँट, गदही आदि का तमोगुणी ।
आवश्यक है ताकि स्वास्थ्य बना रहे । अरहर की दाल रोटी स्वादिष्ट सिद्ध
गुणी दोनों हैं । इसकी पूर्ति खटाई से होती है पैदा करेगा ।
अचाने गन्ना" जब खूब भूख, जवान धीमी और बूढ़ों की कमजोर
वह शाम को दूध पी लिया करें । जवान दो बार और बूढ़े केवल १
लाभदायक स्वस्थ

बे जरूरत न खाओ । सुस्ती पैदा करने वाले शरबत औ
वस्तुओं से पूर्णतया बचे रहो ।

इतना आहार का वर्णन करने के बाद धार्मिक दृष्टिकोण से हम
देखना चाहिये कि इनमें कौन व्यक्ति धार्मिक शिक्षा का अधिकारी है ।
जो सतोगुणी है वह उत्तम अधिकारी है ; क्योंकि उसमें बहुधा
अज्ञान का परदा पड़ा रहता है । वह सत्संग में जाकर अति शीघ्र स
धारण कर लेगा और ज्ञान ध्यान की बात शीघ्र समझ लेगा ।
लिये केवल सत्संग पर्याप्त है । वह ज्ञान का अधिकार रखता है ।

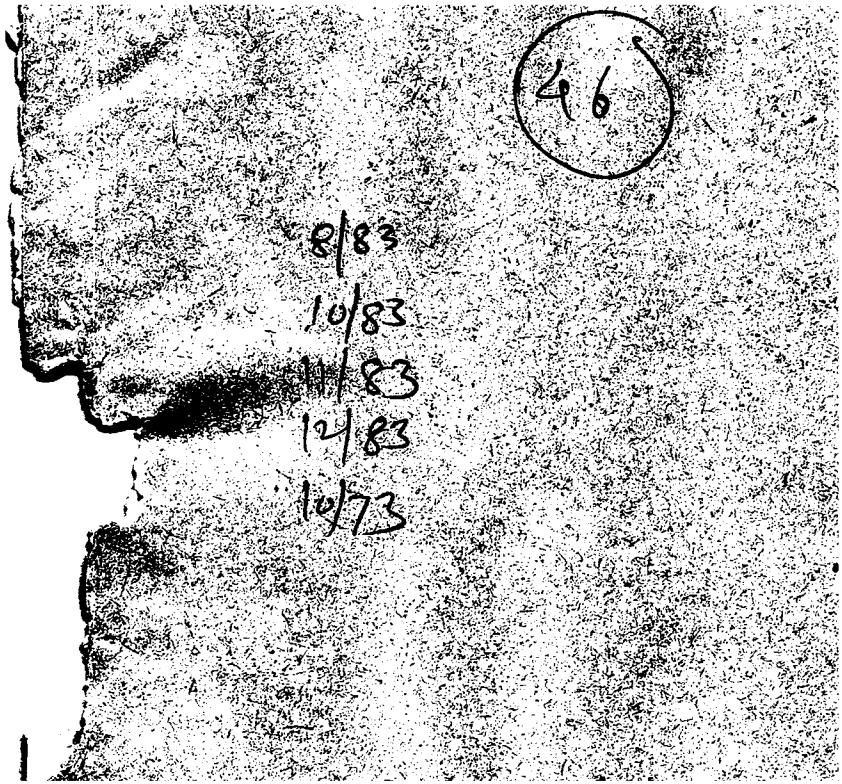
496
8/83
10/83
11/83
12/83
10/73